कवियों द्वारा केसरिया जी तीर्थ का महत्व व छन्द (प्रमाण),

कविता के माध्यम से गीत का प्रस्तुतिकरण

(1) संवत् 1742 में आसपुर निवासी शेठ भीमाजी पोरवाड़ संघ लेकर धूलेव में आए और पूजा केसर चन्दन से की व कस्तुरी आदि का विलेपन किया और चम्पा, मोगरा, जाई–जूई व गुलाब के पुष्प धारण कराए और सुबह–शाम आंगिया धारण कराई जिसका वर्णन "भीमचो पाई" जिसके कर्त्ता भट्टारकजी महाराज कीर्तिसागरसूरिजी के शिष्य है और आपने इस चौपाई की रचना सम्भवत् 1742 में की जिसकी एक व्रत सम्वत् 1749 की लिखी हुई।

इस समय "श्री विजयधर्मलक्ष्मही ज्ञान मन्दिर" आगरा में मौजूद है। चौपाई तो बड़ी है लेकिन तीर्थ धूलेव में आए और पूजा अर्चना की।

इस चौपाई में यह बात बतलाई गई है कि जिस समय सेठ भीमाजी पोरवाड (आसपुर) इस तीर्थ की यात्रा करने आए तब और गाँवों से भी यहां संघ आए हुए थे और सब श्वेताम्बर थे जिस कारण सब संघ–समुदाय को सेठ भीमाजी ने भोजन करवाया और इस तीर्थ पर ध्वजा चढ़ाई ऐसा उल्लेख है।

(2) इसके बाद सम्वत् 1868 की बनाई हुई लावनी जिसमें सदाशिवराव ने इस तीर्थ पर आक्रमण किया जिसका उल्लेख है। इसी हकीकत को और स्पष्ट करते मुनिराज श्री दीपविजयजी ने एक लावनी सम्वत् 1875 में करीब 80 गाथा की बनाई जिसमें भी सदाशिवराव ने आक्रमण किया जिसका उल्लेख है और इस तीर्थ का वर्णन भी है।

(3) सम्वत् 1890 के वर्ष में एक पुस्तक लिखी गई जिसमें सम्वत् 1773 में छारेडा के भोजा कवि का बनाया हुवा स्तवन है।

(5) श्रीमान् हीरविजयसूरिजी महाराज के समय में एक स्तवन बना है जिसमें अकबर बादशाह का व सूरिजी महाराज का नाम दिया है। अतः तीर्थों के पट्टेवाला वर्णन भी इससे और स्पष्ट होता है और श्री केसरियानाथ जी की स्तुति करते सूरिजी महाराज और बादशाह को भी रचना करने वाले ने याद किया है।

(6) सम्वत् 1797 में श्रीमान् भोजसागर जी महाराज ने इस तीर्थ की महिमा का एक स्तवन बनाया ।

(7) मूलचन्दजी ने एक छंद बनाया जिसमें भी बहुत वर्णन है।

(8) सम्वत् 1860 में रोडजी गुरजी सलूम्बर (मेवाड) निवासी ने एक स्तवन बनाया जिसमें भी मन्दिर का उल्लेख व विधि–विधान का जिक्र है।

(9) सम्वत् 1859 में ईडरगढ़ का संघ आया तब मुनि महाराज रुपविजयजी ने एक लावनी बनाई, जिस में बावन जिनालय व मरुदेवीजी के हाथी का बयान है।

ऊपर बताये अनुसार लावनी, स्तवन, छंद देखने से भी श्वेताम्बरिय विधान का पता चलता है। जो दिल्ली आदि जगहों पर उपलब्ध है।

प्रतिमा का वर्णन

यहाँ पूजन की मुख्य सामग्री केसर ही है। प्रत्येक यात्री अपनी इच्छानुसार केसर चढ़ाता है। बहुत से जैन तो अपने बच्चों को केसर से तोलकर सारी केसर चढ़ाते हैं। प्रातःकाल के पूजन में जल–प्रक्षालन, दुग्ध–प्रक्षालन, अत्तर–लेपन आदि होने के बाद केसर पूजा चालु होती है। धूलेवा में प्रतिमा जी के पूजन की सामग्री का उल्लेख हरिशंकर जी ओझा ने अपनी पुस्तक, 'उदयपुर राज्य का इतिहास' में उल्लेख किया है कि यहां अधिक केसर चढ़ने से तीर्थ का नाम केसरियानाथ जी पड़ गया है।

देखने से पता चलता है कि बावन जिनालय 17 वीं शताब्दी के बाद बना है। लेकिन बावन जिनालय के सामने खड़े रहते दाहिने व बांये हाथ की तरफ जो बड़े मन्दिर है, उनमें सम्वत् 1746 में श्री विजयसागरजी महाराज ने प्रतिष्ठा कराई वह प्रतिमा स्थापित है। श्री केसरियानाथ जी की प्रतिमा के अतिरिक्त इस मन्दिर के ओट के बाहर मण्डप में 22 और देवकुलिकाओं में 54 मूर्तियाँ विराजमान है, जिनका उल्लेख ओझाजी ने अपनी पुस्तक मेवाड़ राज्य का इतिहास के प्रथम भाग पृष्ठ 53 पर किया है।

Extract from the Imperial Gazette of India

(New Edition 1908)

The famous Jain temple sacred to Adinath or Lakhabnath, is annually visited by thousands of pilgrims from all parts of Rajputana & Gujarat. It is difficult to determine the age of this building, but three inscriptions mention that it was repaired in the fourteenth and fifteenth centuries. Indian Antiquary.Vol.I.

इस मन्दिर का जीर्णोद्धार चौहदवीं शताब्दी में महाराणा मोकल जी द्वारा कराया गया। इसके सिवाय इस मन्दिर का मध्यभाग विक्रम संवत् 1685 में सम्पूर्ण होने का प्रमाण मिलता है क्योंकि शिखर के ऊपर दो कारीगरों ने मन्दिर का काम सम्पूर्ण करते समय स्वयं की मूतियां चित्रकार सूत्रधार की जगह खुद का नाम लिखा है, जिनमें से एक का नाम "भगवान" दूसरे का नाम "लाधा" नाम के नीचे सम्वत् 1685 भादवा विद 5 सोमवार लिखा है। इसलिये इस लेख से यह सिद्ध होता है कि शिखर का काम सम्वत् 1685 में सम्पूर्ण हुआ।

ऊपर के कथन से इस मन्दिर का मध्य भाग शिखर आदि विक्रम सम्वत् 1685 में और बावन जिनालय की प्रतिष्ठा सम्वत् 1746 में होने का लेख मिलते हैं। इसलिये यह सिद्ध होता है कि यह मन्दिर सात सौ वर्ष से अधिक प्राचीन है।

"संवत् 1843 वै.शु. 15 पूर्णिमा रविवार बृहत्खरतरगच्छे

श्री जिनभक्तिसूरि पट्टालंकारे भट्टारक श्री 105 श्री जिनलाभसूरिभिः ।

श्री रामविजयादी प्रमुखे सहूकआदेशात् सनीपुर–श्री ऋषभदेवजी"

ऊपर के लेख वाली चौकी के लिये इतिहासवेत्ता गौरीशंकरजी हीराचन्दजी ओझा ने स्वयं के बनाये हुए राजपूताने के इतिहास में पृष्ठ 345 पर उल्लेख किया है लेकिन श्वेताम्बर समाज के आचार्य महाराज के उपदेश से नौ चौकी बनवाई गई। इन तमाम हालात को देखने से पाया जाता है कि चौकी वाले लेख में श्री जिनलाभसूरिजी महाराज का नाम है वह उन्नीसवीं सदी में हुए हैं और उन्हीं के उपदेश से चौकी मण्डप बना है जो श्वेताम्बर आचार्य थे।

इस स्थल को नौ चौकी भी कहा जाता है। इसकी दीवार पर संवत् 1820 वैशाख शुक्ल 15 पूर्णिमा का लेख है जो श्वेताम्बर समाज के आचार्य श्री लाभचन्द सूरिजी महाराज सा द्वारा प्रतिष्ठित है। इसी चौकी में बटुक भैरव जी की प्रतिमा स्थापित है। मुल गंभारे के सामने दरवाजे के उपर मरुदेवी माता की मूर्ति जो हाथी पर सवार है। ऐसा दृश्य केवल श्वेताम्बर समाज के मन्दिरों में ही निर्मित है। लेख इस प्रकार है :

सं. 1820 वर्षे मिः मिः सु श्री भ. जिन "बल्लभसूरी" (302)

"सं. 1820 वर्ष मिः मा. सु. 5 श्री भ. जिनलाभसूरि प्र. धीरगोत्रे श्रे. मोतीचंदकारी जिनः। (303)"

तब समाज के सदस्यों ने उनकी मूर्ति इस तीर्थ में स्थापित की। इससे यह स्पष्ट होता है कि बावन जिनालय का निर्माण व प्रतिष्ठा महाराज सा. विजयसागर जी के निश्रा में सम्पन्न हुई हो क्योंकि इसके पूर्व मूल मन्दिर बैठक में (गम्भारा) विक्रम संवत् 1600 के लगभग हो चुका था इससे सिद्ध होता है कि शिखर का काम सम्वत् 1685 में सम्पूर्ण हुआ। विजय सागर जी महाराज सा. की प्रतिमा के आगे भगवान आदिनाथ की पंच धातु की "3" ऊँची प्रतिमा है इस पर संवतृ 1849 का लेख है। फिर आगे बढ़ने पर श्री गिरनार तीर्थ का स्तम्भ एक ही श्याम पाषाण का 63" ऊँचा है।

बाहरी सभा मण्डप गुम्बजनुमा है। गुम्बज कलात्मक है व इसके चारों ओर देवियां पृथक–पृथक मुद्राओं में व बीच में झुमर शोभायमान है। यह गुम्बज कला के आधार पर 11 वीं–12 वीं शताब्दी का बना होना प्रतीत होता है।

(643)

संवत् 1765 वर्षे माघ मासे कृष्णापक्षे पंचमी तिथौ सोमवासरे भट्टारक श्री विजयरत्न केश्वर तपागच्छे काष्ठासंघे श्रा. पु. दे. वृ. शा. मुहता गौत्रे मुहताजी श्री रामचंद्र जी तस्याभार्या बाई सूर्यदेवि तस्यात्मज मुहताजी श्री सोभाग चंद्रजी मुहताजी श्री सातु जी भाई मुहताजी श्री हरजीजी श्रीपार्श्वनाथ जिन बिवं स्थापितं।

श्री जगवल्लभ पार्श्वनाथ प्रशस्ति

।। ऊँ ।। प्रणम्य परया भक्त्या पद्मावत्याः पदाम्बुजं।
प्रशस्ति ल्लिख्यते पुण्या कविकेशर कीर्त्तिना।।1।।
श्री अश्वसेन कुल पुष्पक रथंचभानुः। वामांग मानव
विकासन राजहंसः ।। श्री पार्श्वनाथ पुरूषोत्तम एष
भाति। धुलेव मंडनकरा करुणा समुद्रः ।। 2।।
श्रीमज्जगत्सिंह महीश राज्ये। प्राज्यो गुणेर्जात ईहालथोयं।।
आपुष्पदत्त स्थिरतामुपैतु। सं पश्यतां सर्व सुखप्रदाता।।3।।
सुर मन्दिरकारक सुखद, सुमतिचंद्र महासाधः।
तपे गच्छ में तप जप तणो, उपत उदधि अगाधः।।4।।
पुन्य थाने श्री पार्श्वनो, पुहवी परगट कीध।
खेमतणो मनषा तिसु, लाहो भव नो लीध।।5।।
राजमान मुहता रतन, चातुर लषमीचंद।
उच्छव किधा अति घणां, आणी मन आनन्द।6।।
दिल सुध गोकलदासरे, कीध प्रतिष्ठा पास।
सारे ही प्रगटयो सही, जगति में जस वास।।7।।
सकल संघ हरषित हुओ, निरमल रवि जिन नाम।
राषो मुनि महंत सरस करता पुण्य सकाम।।8।।
कवित। सांतिदास, सचित संत दावडा लषमीचंदहः।
संघ मनुष्य सिरदार सहस किरण सुख के कंदहः।।
वल्लभ दोसी वीर धीर, जिन धर्म धुरंधरः।
मुलचंद गुण मूलहीर धाया उर गुणहरः।।
सकल संघ सानिधकरः सुमतिचंद महासाधः।
पास सदन कियो प्रगट, निश्चल रही निरबाधः।।9।।

श्लोक

द्वारेक पूज्यकृद कृपाख्यो देवेर प्रविलग्नः विचित्रः।
पूजाव तेस्मै प्रविक्तं लितावै संघेन सत्सौम्य गुणान्वितेन।।10।।
गजधर सकल सुज्ञान, धराहरी कीधो गुण हेर।
रच्यो बिंब जिनराजको करणबंत कुबेर।।11।।
आर्या। शशीव सुख राज वर्षे। माधवमासे वा
पक्षेच च पंचम्यां भगुवारे हि कृता प्रतिष्ठा जिनेशस्य।
महागिरि महासूर्य्य, शशिशेष शिवादयः।
जगवल्लभ पार्श्वस्य तावतिच्छतु विंवक।।13।।
श्री संवत् 1801 शाके 1666 प्रमिति वैशाख
सुदि 5 शुक्रवासरे श्री जगवल्लभ पार्श्वनाथ ।
प्रतिष्ठिं बृहत्तपागच्छीय सुमतिचन्द्रगणिना काराति ।।श्रीरस्तु।। शुभं भवतु।।
देवल तो मजबूत बना है। उपर इंडा सोने का।।
'ओलुं दोलु कोट बनाया। सब संगीनबंध चुनेका।।14।।

नौबतखाने के लेख

ऊँ श्री केसरियानाथजी रे नौबतखानारी लिख्यते। शुभ संवत् 1886 रा शाके 1654 माने मासोत्तमे मासे मृगसिर मासे शुक्लपक्षे तिथौ रविवासरे श्री षडक देशे श्री धुलेवनगरे। धीदेव श्रीरिखबदेवजी महाराज के नागारखानारी प्रतिष्ठा करि जिणरी प्रशस्ती श्रीमहाराजाधीराज महाराणाजी श्री श्री श्री श्री श्रीजवानसीघजी विजयराज्यै करापितं जैसलमेरु वास्तव्य ओसवाल ज्ञाती वृद्ध शाखायां बाफणा गोत्रे सु श्रावक पुन्य प्रभावक श्रीदेवगुरुभक्तिकारक श्रीजिनाज्ञा प्रतिपालक पंचपरमेष्ठी महामंत्र स्मरणात् सम्यक्त मूल स्थूल द्वादश वृतधारक सर्व सुभबोल लायक संघ नायक सेठजी श्रीगुमानचंदजी तत्पुत्र बहादरमलजी सवाईसंघ मगनी राम जोरावरमल्ल प्रतापसिंघ कुँवर सुलतानचंद भभुतसिंघ दानमल श्यामसिंघ हिमतसिंघ जेठमल चन्दणमल लघुपुत्र पुनमचंद गंभीरमल दीपचंद ईंद्रचंद सरुपचंद्रादि श्री सपरिवारेण श्रीधुलेवनगरे श्रीरीषभदेवजी महाराज रे नगारखानो करायो धजादंड चढायो श्रीउदेपुर सुसंघ लायके महोत्सव करायो अट्ठाई महोत्सव प्रतिष्ठितं बृहत्खरतर गणे वर्तमानं भट्टारक श्रीजिनहर्षसूरिणां आदेषात् किर्तीरत्नसूरि साषायाँ।

र्उ चारित्रोदय गणितात् शिष्यं पं. ऋषभदासतत् शिष्य पं. कृशलचंद्रैण उपदेशात् कामदार जेष्ठमल्लजी तत्पुत्र ऋषभदास भद्रं भूयात्। श्री। भण्डारी दलीचंदजी भन्डारी आदमजी।।श्री।।।।श्री।

इस तरह नौबतखाने का स्पष्ट शिलालेख देखने से और सम्वत् 1685 से लगाये सम्वत् 1886 तक के प्रमाण देखते हुए इस मन्दिर का बनवाना व मालिकाना हक्क और कब्जा जैन श्वेताम्बर समाज का ही साबित होता है और दिगम्बर भाई श्री सम्वत् 1702 से सोने–चाँदी आदि की आंगी वगैरह का पहनावा जारी होना मानते हैं। अतएव सिद्ध होता है कि दिगम्बर भाईयों की मान्यतानुसार श्वेताम्बर विधि–विधान से पूजा तो पहले से ही होती आई है, लेकिन आंगी का आरोप 321 वर्ष से चला आता है।

इस तरह मन्दिर के बनवाने का वृत्तान्त शिलालेख आदि से जैसा समझ में आया उल्लेख किया गया है और यह मन्दिर हर सूरत में श्वेताम्बर समाज का है और श्वेताम्बर मतानुसार बना है व पूजन अर्चना श्री श्वेताम्बरीय विधि विधान से होती आई है।

दर्शनार्थ :
माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र जी मोदी की
अमेरिका यात्रा
के दौरान लौटाई गई जैन प्रतिमा

ध्वजा चढ़ाना

प्रत्येक धर्म–समुदाय के मंदिर की पहचान के लिए ध्वजा दण्ड/ध्वजा उसकी पहचान होती है। इसलिए जैन श्वेताम्बर ध्वजा वर्तमान में प्रति वर्ष पर चढ़ाने के नियम है। पूर्व में क्या था ? कोई उल्लेख नहीं मिलता लेकिन वि.सं. 16 वीं शताब्दी में मेवाड़ के मंत्री दानवीर भामाशाह ने ध्वजा दण्ड चढ़ाने का उल्लेख मिलता है।

इसके पश्चात् वि.सं. 1886 में सुल्तानमल बापना द्वारा चाँदी का ध्वजा दण्ड चढ़ाने का उल्लेख है और चांदी के दण्ड पर निम्न लेख उत्कीर्ण है। जो वर्तमान में विद्यमान है। ध्वजादण्ड देवस्थान भण्डार में सुरक्षित है। जिसे देखा जा सकता है।

लेख की प्रति निम्न है :

ध्वजादंड की पाटी के लेख की नकल :

श्री ईष्टदेवाय शुभ संवत् 1886 रा. शाके 1654 प्रवर्तमाने मीगशर मासे शुक्लपक्षे दशम्यां रविवासरे षडकदेसे श्रीधुलेवनगरे श्रीदेवाधिदेव श्रीरीखबदेव महाराजरे दंड चढाव्यो महाराजाधीराज महाराजाजी श्री श्रीयुवानसिंघजी राज्यै जेसलमेरु वास्तव्य ओसवालज्ञातिय वृद्धिशाखाय बाफणा गोत्रे शेठ बहादूरमल, सिवाईसिंह, मगनीराम, जोरावरमल्ल, प्रतापसिंघ, कुंवरसुलतानचंद, सपरिवारेण करापितं, प्रतिष्ठितं सर्व सूरिभीः ऋदहाश उपदेशात् भंडारी श्री दलसिंघजी भाइचन्दजी श्रीरस्तु। भद्रं भूयात्

इस लेख के बाद फिर आगे यह वर्णन किया गया है कि :

"भण्डार की तरफ से श्वेताम्बर रीति से पूजन व आरती आंगी आदि होती है बड़ी मूर्ति के सिवाय अन्य जो मूर्तियां चारों तरफ मौजूद है उन पर भी आंगी कर श्रृंगार करना संवत् 1842 मं शुरू हुआ है।"

उक्त प्रमाण से यह भली प्रकार सिद्ध है कि मूर्ति की श्वेताम्बर विधि–विधान से पूजा अर्चना होते हुए लगभग 300 तीन सो वर्ष होने आये और अन्य मूर्तियों पर आभूषण आदि आरोप लगते हुए भी लगभग पौने दो सौ वर्ष होने आये।

यह भी पाया जाता है कि श्री केसरियानाथजी महाराज की मूर्ति के पीछे चांदी की पिछवाई बनाकर लगाई गई, वह भी श्वेताम्बर समाज के श्रावक की आरे से है। देखिये उस पर का लेख।

"श्री रीषभदेवजीमहाराज के पछवाइधारण कीनी संगवीमगनीराम वा भभूतसिंहजी पुनमचन्द दीपचन्द सोभागमल चाँदमल बाफना चांदी सीके रु. 1000 भर की चढाई 1927 चैत्र वदी 13 वार थावर कारीगर–सुनार भगवान भेरूलाल सदर गांमे।"

यह पिछवाई रतलाम के सेठ मगरीरामजी भभूतसिंहजी ने अपनी ओर से धारण कराई है।

इस के सिवाय इन्हीं सेठजी की तरफ से मन्दिर के मूल (निज) गम्भारे से चांदी का काम बनवाया जिसके लेख को भी देखा जाना चाहिए।

"1. श्री ऋषभदेवजी महाराज के पछवाई धारण कहीनी संगवी मगनीराम व भभूतसिंहजी पुनमचन्दजी दीपचन्दजी सोभागमल चांदमल बाफणा चांदी सीके रु. 1800 भर की चढ़ाई संवत् 1927 चेत वदी 13 वार थावर कारीगर सुनार भगवान भेरूलाल सरणा में"

चांदी की पछवाई कहां है इसकी जानकारी लेखक को नहीं है। संभव है कि वर्तमान परिकर लगा हुआ है । उसके नीचे ही दी, यह जांच का विषय है।

पूजा विधि :

जैन परम्परा के प्रत्येक जैन श्वेताम्बर मंदिर में सर्वप्रथम जल पक्षाल बाद में दूध पक्षाल होता है और बाद में अन्य सामग्री की पूजन के बाद केसर की पूजा होती है। प्रतिदिन इतनी अधिक केसर चढ़ाई (पूजा) की जाती थी। जिसके फलस्वरूप इस तीर्थ नाम भी केसरिया जी पड़ गया।

जैसा कि पूर्व में वर्णित है कि पूजा श्वेताम्बर रीति से होती है, आँगी व आभूषण आदि चढ़ाए जाते हैं जो भी श्वेताम्बर समाज की है। अतः इसका पूर्व में विस्तृत विवरण देना उपयुक्त प्रतीत नहीं होता।

भारत का यह एक मात्र तीर्थ है जिसकी श्वेताम्बर समाज में अटूट विश्वास व श्रद्धा है। अपनी इच्छा के पूर्ण होने पर वे केसर, जमीन व आभूषण आदि भगवान को अर्पित करते हैं। उदाहरण के लिए औरंगाबाद व नासिक आदि शहरों में भूमि भगवान के नाम पर भेंट की। वर्तमान में क्या स्थिति है ? वह ज्ञात नहीं है।

कहा जाता है कि मयणा सुन्दरी ने भी इसी प्रतिमा (जब यह प्रतिमा उज्जैन में स्थापित थी) की भक्ति व पूजा की तब श्रीपाल को कुष्ठ रोग से मुक्ति मिली।

श्री मूलचन्द श्रावक जो बड़नगर (गुजरात) के रहने जाते थे, वे अपने वहां पर केसरियानाथ की पूजा व भक्ति करते हैं उस समय बड़नगर में अनेक श्वेताम्बर मंदिर होना बताया गया।

एक दिन उनको विचार आया कि केसरियाजी तीर्थ जाकर भक्ति की जाए तब वे केसरिया जी आ गए, उस दिन से केसरियाजी रहते, भक्ति–भाव करते और यात्रीगण प्रसन्न होकर ईनाम के स्वरूप राशि उनके सामने रख देते, वे किसी यात्री से मांगते नहीं थे और भोजनशाला में सशुल्क भोजन करते। ऐसा समय आया कि किन्हीं कारणों से उन्हें भेंट में राशि नहीं मिली और भोजनशाला में 12 दिन के 12 रूपये कर्ज हो गए और भोजनशाला के कर्मचारी ने उनको रूपये जमा कराने को कहा तो यह सुनकर भक्त मूलचंद ने भगवान के सामने जाकर प्रार्थना की, उसकी इज्जत बचाओ, तब इस प्रकार से वर्णन है कि भगवान ने

स्वयं मूलचंद के नाम से रात्रि में दुकानदार की दुकान पर जाकर आवाज दी कि मेरे रूपये जमा करें। पूर्व में प्रायः यह प्रथा कि, नीचे दुकान व उपर मकान जो आज भी कहीं गांवों में देखा जाता है। कर्मचारी को आवाज देकर रूपये जमा करने को कहा लेकिन उसने यह कहकर मनाकर दिया कि रात्रि में वे नहीं आएगा और प्रातःकाल जमा करा दें, लेकिन भगवान ने यह कहा कि रूपये चबूतरे में रख दिया है, लेकर जमा कर देना। संयोग से भक्त को आशीर्वाद से अच्छी भेंट मिली। वह मूलचन्द रूपये लेकर भोजन के रूपये, जमा कराने गया तो सेठ ने कहा कि तुमने रात्रि में रूपये चबूतरे पर रख दिये, उसने लेकर जमा कर दिये। मूलचन्द समझ गया कि भगवान ने उसकी इज्जत रख दी और पुनः प्रतिदिन की तरह भक्ति में लीन रहता।

भक्ति करते–करते ही उसके मुँह से आरती की धुन निकली और आरती की रचना की और जो कि वर्तमान में प्रचलित है, यह भक्ति का ही प्रभाव है।

प्रातःकाल आंगी के बाद, सायंकाल सर्दी में, अन्त में मंदिर के पट बंद होने पर आरती की जाती है। जैन श्वेताम्बर परम्परा में इस आरती को सभी मंदिरों में बोला जाता है।

जब मूलचंद की उम्र अधिक हो गई और वृद्ध हो गए, उनके चार बेटे थे वे अपने गांव से आए और पिताजी को कहा कि आप की उम्र ज्यादा हो गई और अब घर चलो मूलचंदजी ने स्पष्ट इन्कार कर दिया और कहा कि वे भक्ति में ही लीन रहेंगे, उनका मन यहीं रहता। चारों बेटों ने चिंता करते हुए भगवान से प्रार्थना कि उनको आपके भरोसे छोड़ रहे है, उनको सद्बुद्धि देंवे कि वे घर लौट चले।

चारों पुत्र निराश होकर चले गए। कुछ दिनों पश्चात् एक पुत्र को स्वप्न आया कि वे जाकर उनके बाबा को ले आए, तब चारों पुत्र एक साथ केसरिया जी के लिए निकल पड़े। इधर मूलचंद जी को स्वप्न में भगवान ने कहा कि अब वे अपने गांव में जाकर रहे तब भगवान का कहा कि वे पूजा भक्ति कहां करेगा? तो भगवान ने कहा कि वहीं पर करना ।

मूलचंदजी ने गांव जाने के पूर्व भगवान से उनकी निशानी मांगी जिससे से वे पूजा कर सके तब भक्ति के समय मूलचन्द के पास भगवान का अगूंठा आकर गिरा, मूचलंदजी उसका अपने साथ गांव ले गए ओर वहां पर मंदिर में विराजमान कराकर पूजा प्रारम्भ की। वहां पर गांव से मुनिसुव्रत स्वामी मन्दिर में प्रतिमा के सामने चांदी की डिब्बी में लेपन कर उसकी प्रतिष्ठा विक्रम संवत् 1995 वैशाख सुदि तीज पर पंडित बेचरदास मणिलाल भोजक द्वारा कराई गई।

भगवान के अंगूठे के स्थान पर वर्तमान में बिखरा हुआ है और कुछ वर्षों पूर्व चांदी का अंगूठा स्थापित किया। भक्ति का एक स्वरूप देखे कि सं. ..... में इन्दौर / रतलाम के राजा ने केसरियाजी नी आक्रमण किया तो मेवाड़ की सेना ने मंदिर के चारों ओर से बचाव के

लिए घेर लिया। विपक्ष की सेना जो बहुत बड़ी थी उसने आक्रमण किया। उसी समय एक व्यक्ति नीचे घोड़े पर सवार होकर आया और चारों ओर तीरों की बौछार होने लगी और विपक्ष की सेना युद्ध छोड़कर पीछे भाग खड़ी हुई और उनका नगाड़ा भी वही छोड़कर चले गए जिसको केसरिया तीर्थ में विधिवत् स्थापित कराया जो कि नोबतखाना में विद्यमान है।

ऋषभदेव व खेरवाड़ा तहसील क्षेत्र में दिगम्बर समाज की बहुतायत होने के कारण और उनकी कट्टरवादी से यह मंदिर जैन अनुयायियों के हाथ से बाहर हो गया।

प्राचीन दिगम्बर समाज की प्रतिमा की पहचान स्वयं कर, कन्दोरा हीन, नेत्रहीन होती है। दोनों ही बातें लंगोट होने की पुष्टि दिगम्बर समाज ने न्यायालय में भी की है लेकिन वर्तमान में कई बार लेप हो जाने से अंश दिखाई न दे। इस प्रकार से यदि दूर से अवलोकन करें तो नेत्र का कुछ भाग (नीचे का) खुला है। ये तथ्य दिगम्बर समाज ने न्यायालय में स्वीकार किया है।

इसके साथ–साथ मेवाड़ के तत्कालीन महाराणा कुम्भा ने अपने तीन शिलालेख में कोई विवादित बात नहीं बताई। इसके साथ ही महाराजा कुम्भा ने कई श्वेताम्बर समाज के मंदिरों का जीर्णोद्धार कराया।

इसी मंदिर का जीर्णोद्धार महाराणा मोकल ने (संवत् 1421, 1435) में कराने का उल्लेख है। प्रतिमाओं पर व अन्य स्थानों पर श्वेताम्बर आचार्यों का लेख है तथा श्री जगवल्लभ पार्श्वनाथ का निर्माण व प्रतिष्ठा तपागच्छ आचार्य श्री सुमति मुनि जी म.सा. की निश्रा में सम्पन्न हुई जिसका लेख आगे मंदिर प्रकरण में दिया जा रहा है तथा परिक्रमा क्षेत्र में भगवान जिनालय की भक्ति। श्री विजय सागर जी म.सा. जो श्वेताम्बर समाज के थे, उनकी प्रतिमा है। इसके अतिरिक्त प्राचीन प्रतिमाएं श्वेताम्बर की है और दिगम्बर समाज की अधिकता प्रतिमाएँ 18वीं शताब्दी की व बाद की प्रतिष्ठित है।

इसके पूर्व 10 वीं शताब्दी में तत्कालीन महाराणा जैत्रसिंह ने किसी घटना के कारण यह आदेश प्रसारित किया कि जहाँ–जहाँ पर किले बनवाए वहां पर केसरिया जी (आदिनाथ भगवान) का मंदिर बनाया जाएगा।

इसके बाद वि.सं. 1643 में मेवाड़ के भामाशाह ने केसरिया जी मंदिर पर ध्वजारोहण किया जिसका वर्णन आगे किया गया है। नगर सेठ श्री बापना ने ध्वजारोहण चढ़ाया जिस पर लेख भी अंकित है। यह भण्डार में सुरक्षित है।

वि.सं. 18 वी शताब्दी में महाराणा फतहसिंह जी ने उस समय में 125 लाख रुपये हीरा, पन्ना आदि से जड़ित आंगी धारण करवाकर भेंट की। प्रारम्भ में केसर की पूजा होती रही है, आंगी धारण होती रही है, जेवर आदि भी धारण होते रहे हैं, यह सब दिगम्बर समाज में वर्जित है।

संक्षेप में यह कहने का प्रयास किया है कि :

1) सर्वप्रथम वि.सं. 964 के लगभग मंदिर का निर्माण हुआ।
2) महाराणा मोकल के समय जीर्णोद्धार हुआ, उस समय श्वेताम्बर समाज के श्रावक थे जिन्होंने इस कार्य को सम्पन्न किया।
3) सम्राट अकबर ने केसरिया जी की पहाड़ी व उसके क्षेत्र को श्वेताम्बर समाज के आचार्य श्री हीरविजय जी को भेंट में दिया।
4) जीर्णोद्धार के या पूर्व में शिखर का कार्य चल रहा था जो वि.सं. 1685 में पूर्ण हुआ इसके पश्चात् नव चौकी, बावन जिनालय का कार्य सम्पन्न हुआ जिसका सम्बन्धित पत्रावली से सिद्ध होता है। इसके साथ–साथ श्वेताम्बर समाज को मुनि श्री विजयसागर जी की मूर्ति स्थापित की।

मरूदेवी माता का चित्रण/वर्णन श्वेताम्बर समाज के विद्वानों द्वारा रचित ग्रंथों में ही मिलता है। श्री पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा श्री सुमति सागर जी जो श्वेताम्बर के आचार्य/मुनि थे, उन द्वारा सम्पन्न की गई।

मेवाड़ के महाराणाओं की भी श्वेताम्बर साधु के प्रति वहां सम्मान था, यहां तक महाराणा प्रताप ने भी हीर विजय जी को मेवाड़ में पधारने का निमन्त्रण दिया। प्रति संलग्न है। विवादास्पद होने पर मेवाड़ राज्य के न्यायालय द्वारा पृथक–पृथक समय निर्णय हुए जो श्वेताम्बर समाज पक्ष थे। उच्च न्यायालय द्वारा श्वेताम्बर के पक्ष में निर्णय हुआ लेकिन एक तकनीकी से लेखन सुदि से विवाद अन्यत्र गया। कई ऐतिहासिक प्रमाण भी है और समय समय पर उचित स्थान पर वर्णन किया है।

दर्शनार्थ :
माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र जी मोदी की अमेरिका यात्रा के दौरान लौटाई गई एक ही परिकर में तीन कांस्य जैन प्रतिमा

विश्वास, श्रद्धा व भक्ति का स्वरूप

श्री केसरिया जी तीर्थ पर भारत के अनेक जैन व अन्य धर्मावलम्बियों का विश्वास रहा हैं। इनके अतिरिक्त मेवाड़ के शासकों में इस मन्दिर के प्रति श्रद्धा रही हैं जिसके फलस्वरूप विभिन्न महाराणाओं ने अपने आदेश प्रसारित करते हुए इस तीर्थ की रक्षा के लिए एवं धर्म संचालन के लिए जैन श्वेताम्बर के लिए ही कहा।

1) किसी की मनोकामना की पूर्ति के लिए भक्तगण बोलमा मांगते थे व पूर्ण होने पर बोलमा पूरी करते हैं।
2) बालक होने पर उसके तोल के बराबर केसर चढ़ाते हैं।
3) जमीन भगवान के नाम भेंट करते है जैसे नासिक, औरंगाबाद, नागदा आदि।
4) बाल कटवाने पर उसके तोल के बराबर केशर चढ़ाते है।

इसी प्रकार भील जाति के सदस्यों द्वारा अपराध करने पर भी यदि केसरिया की सौगन्ध खाते हैं तो सत्य के अतिरिक्त कुछ भी नहीं बोलते।

ऐसे कई प्रमाण मिलते है महाराणा द्वारा :

1) महाराणा मोकल द्वारा सर्वप्रथम 14वीं शताब्दी (सं. 1423) में इस तीर्थ का जीर्णोद्धार कराया। उस समय उनके मंत्री रामदेव व सहस्त्रपाल नवलखा थे जो श्वेताम्बर आमनाय थे। जिर्णोद्धार करने का संदर्भ पृष्ठ सलंग्न है।
2) अकबर जब हमला करने आया तब उसे पता चला कि इस मन्दिर के एक हिस्से में मस्जिद जैसे आकार का स्तम्भ बना हुआ है तब सम्राट अकबर ने यहां आकर दर्शन किए तथा इस क्षेत्र में किसी प्रकार की जीव हिंसा नहीं करने का फरमान जारी करते हुए यहां की पहाड़ियों को श्वेताम्बर समाज को दी गई। आदेश की प्रति सलंग्न है। पत्र की प्रतिलिपी संलग्न है।

महाराणा प्रताप ने श्वेताम्बर साधु को आने का आमन्त्रण किया। अन्य महाराणाओं ने जैसे महाराणा सज्जनसिंह जी, शम्भूसिंह जी, फतहसिंह जी आदि ने जैन श्वेताम्बर समाज के पक्ष में निर्णय किया तथा आभूषण आदि भेंट किए।

दानवीर भामाशाह व अन्य अनुयायियों ने चांदी की ध्वजा दण्ड चढ़ाकर भेंट किया ।

(643)

संवत् 1765 वर्षे माघ कृष्णापक्षे पंचमी तिथौ सोमवासरे भट्टारक श्री विजय रत्न केश्वर तपागच्छे काष्ठासंघे श्रा. पु. दे. वृ. शा. मुहता गोत्रे मुहताजी श्री रामचंद्र जी तस्यभार्या वाइ

सूर्यदेवि तस्यात्मज मुहताजी श्री सोभाग चंद्रजी मुहता जी श्री सातु श्री भई मुहताजी श्री हरजीजी श्री पार्श्वनाथ जिन विंव स्थापितं।

श्री जगवल्लभ पार्श्वनाथ प्रशस्ति।

(644)

।। ऊँ ।। प्रणग्य परया भक्तया पद्मावत्याः पदाम्वृजं। प्रशस्तिल्लिख्यते पुण्या कवि केशर कीर्त्तिना।।१।। श्री अश्वसेन कुल पुष्पक रथंच भानुः। धुलेव मंडनकरा करूणा समुद्रः।।२।। श्री मज्जगत्सिंह महीश राज्ये। प्राज्यो गुणै र्जात ईहालथोयं।। आपुष्पदत्त स्थिर तामुपैतु। सपश्यतां सर्व सुख प्रदाता।। ३।।

(632)

श्री आदिनाथ प्रणमामि नित्य विक्रमादित्य संवत् 1572 वैशाष सुदि 5 वार सोमवार श्री जशकराज श्री कला भार्या सोवनवाई चीजीराज यहां धुलेवा ग्राम श्री ऋषभनाथ प्रणम्य कडीआ फीईआ भार्या भरमी तस्या पवेई सा. भार्या हासलदे तस्य पगकारादेव रारंगाय ग्त्रात वेणीदास भार्या लास्टी चाचा भार्या लीसा संकलनाथ नरपाल श्री काष्ठा संघ .... श्री ऋषभनाथ जी श्री नाभिराज कुष श्री तां–री कुल.....।

यहां से ही पुनः पगलियों द्वारा नीचे लौटते हैं तो उतरते समय दाईं ओर श्री जगवल्लभ पार्श्वनाथ का मंदिर है जिसे सहस्त्रफणा पार्श्वनाथ का मंदिर भी कहा जाता है। इसकी दीवार पर निम्न लेख उत्कीर्ण है :

इसकी प्रतिष्ठा वि.स. 1801 में श्री सुमतिचन्द ..... की निश्रा जो श्वेताम्बर समाज के मुनि थे। इससे भी यह स्पष्ट होता है कि यह मन्दिर श्वेताम्बर ही है। इस पर लेख अंकित जो निम्न प्रकार से है कि श्वेताम्बर समय का ही है।

नव चौकी के नीचे बड़ा सभामण्डप बना हुआ है जहां भक्तगण खड़े रहकर दर्शन एवं भक्ति करते हैं, इसके एक किनारे पर एक चबुतरा बना हुआ है जिस पर कथावाचक बैठकर कथा बांचता है जो जैन श्वेताम्बर परम्परा में नहीं आता है जिसे जैन श्वेताम्बर समाज द्वारा बन्द करवाना चाहिए।

श्री केसरियाजी तीर्थ का विवाद

जैन साहित्य के अनुसार श्री शांतिसूरी जी म.सा. का सन् 12.06.1932 को श्री केसरियाजी तीर्थ में प्रवेश होना निश्चिय हुआ तब मंदिर के प्रभारी को लिखित में बताया कि यह इन मुनि का प्रवेश रोका जाए लेकिन पत्र विलम्ब से मिलने के कारण प्रवेश हुआ। प्रवेश के समय सभी जैन धर्मावलम्बियों ने सभी मंदिर के कर्मचारी ने मिलकर महाराज सा. का स्वागत किया। यह सम्भव है कि विवाद इस तिथी के पूर्व उत्पन्न हो गया हो।

लेकिन यह विवाद सन् 1960 में बताया गया कि राजस्थान उच्च न्यायालय में श्वेताम्बर मात्र का होना सिद्ध हुआ, लेकिन निर्णय में एक त्रुटि रह गई कि "श्वे" शब्द सीधी लाईन है न लिखकर ऊपर जोड़ा गया प्रतीत होता है जिसमें न्यायाधीश के हस्ताक्षर नहीं होना बताया गया तब से उच्चतम न्यायालय अपील के रूप में दर्ज हुआ। इस बीच भील समुदाय, ब्राह्मण समाज ने भी उनका मालिकाना हक की याचिका दर्ज कराई जो दर्ज होकर निरस्त कर दी गई और जैन मंदिर है, विचार निर्णय हुआ लेकिन बाद में पुनः याचिका प्रस्तुत होने पर मंदिर पुनः याचिका को भेजा गया और उसी को पुनः में स्थानान्तरित हुआ है जहां पर वर्तमान कार्यवाही होती है।

अब प्रश्न यह है कि उच्चतम न्यायालय ने केवल जैन मंदिर होने का निर्णय किया इसकी आवश्यकता नहीं थी। इसी प्रकार का निर्णय या डॉक्यूमेन्ट पूर्व में लिखा है और घोषित किया है। इस प्रकार 60 वर्ष व्यतीत हो गए और लाखों रूपये खर्च हुए, इससे केवल सरकार को लाभ हुआ है।

सरकार गजिटियर की घोषणा निम्न प्रकार है : (पुर्व उल्लेख है)

(पुर्व में पेज नम्बर 31 पर अंकित है)

तत्कालीन महाराणाओं की भी अटूट आस्था और विश्वास इस मंदिर था और प्रायः महाराणाओं के मंत्री भी श्वेताम्बर समाज के ही थे। इस बारे में इस मंदिर का जीर्णोद्धार 14वीं शताब्दी में तत्कालीन महाराणा मोकल जिनके मंत्री रामदेव व सहणापाल थे उस समय कराया गया था (महाराणा मोकल का समय वि.सं. 1421 से 1435 तक)

जीर्णोद्धार कराने की प्रति संलग्न है (स्केन) :

(1) महाराणा श्री जगतसिंहजी ने सम्वत् 1802 वैशाख सुदी 6 बुधवार को लिखाया सो अब तक मौजूद है।

सम्वत् 1874 जेठ सुदी 14 गुरुवार को एक परवाना महाराणाजी श्री भीमसिंहजी ने लिखा दिया जिससे भी कुल अधिकार जैन श्वेताम्बर पंचों का पाया जाता है।

(5) सम्वत् 1882 फाल्गुन वदी 7 बुधवार को एक परवाना सलूम्बर के रावजी साहब श्री पदमसिंहजी ने सिसोदिया खूमजी के नाम लिखा है जिसको देखते भी यह पाया जाता है कि इस तीर्थ पर कदीम से जैन श्वेताम्बर पंचों का अधिकार है।

(6) सम्वत् 1889 जेठ विद 5 रविवार को एक आदेश महाराणाधिराज श्री जवानसिंह जी ने समस्त सेवक भण्डारीयों के नाम लिखा है उसमें भी यह उल्लेख है कि "नगर सेठ वेणीदासजी बिगेरे जैन श्वेताम्बरी पंचों का कहे आदेश अनुसार करे।"

(7) सम्वत् 1889 जेठ बिद 14 का लिखा हुवा आदेश उदयपुर दीवान साहेब महेताजी श्री शेरसिंहजी ने भण्डारी सेवकों के नाम लिखा जिसमें भी ऊपर के आदेश में ही लिखा है।

(8) सम्वत् 1906 वैशाख प्रथम सुदी 9 को एक आदेश में महाराणाधिराज श्री सरुपसिंहजी ने भण्डारी जवानजी वगेरह के नाम (18) अट्ठारह बिद् आदेश कर लिखा दिया जिस की छट्ठ में उल्लेख है कि –

"सेठ जोरावरमलजी सेठ हुक्मीचन्दजी बिगेरे पंचों के अनुसार भला आदमी की सलाह अनुसार काम करज्यो।"

इसमें भी श्वेताम्बरियों का पूरा हक पाया जाता है।

(9) सम्वत् 1906 वैसाख विद 9 शनिवार को दीवान साहब श्री महेताजी शेरसिंहजी ने भण्डारी सेवकों के नाम लिखा है उससे भी श्वेताम्बर समाज का हक पाया जाता है।

(10) "थाने महाराणा श्री सरुपसींघजी आदेश अनुसार को परवानों कर दीदो है जीं अठा सुँ हकमीचन्दजी माणकचन्दजी बठे आवे हे सो बन्दोबस्त करे वीं मुवाफिक कराय दीजो।"

(11) सम्वत् 1889 मंगसर विद 14 के आदेश की पूरी नकल पहले लिख चुके है।

इसके सिवाय भंडारी–पूजारियों के नाम व भण्डारी–पूजारियों पंचों के नाम कई बार कागज लिखे है उनमें से कुछ नकलें हम यहां लिखेंगे।

इन सभी निर्णयों की प्रति संलग्न है :

(अ) सम्वत् 1 51 महा सुदी 2 का कागज भण्डारी कुबेरजी का लिखा हुआ, नगरसेठ पंचों जैन श्वेताम्बरी के नाम जिस में उल्लेख है कि :

"सदीप की रीती परमाणे सेवा पूजा करांगा ओर गेणों मुगट कुँडल बाजुबंध कडा हार विगेरे आभूषण सदीप परमाणे धारण करांवेगा छत्र चामर विगेर सरव सामग्री सेवा में हाजर राखेंगा कसर पाडागा नहीं।"

(ब) सम्वत् 1876 मंगसर सुदी 13 भण्डारी दोलतराम दलीचन्दजी जैन श्वेताम्बर पंचों

के नाम लिखी जिसमें उल्लेख है कि –

"श्री केसरियाजी के धारण वास्ते मुगट कुँडल कडा भुजबंध कंदोरा विगेरेह आभूषण तथा चामर छत्र विगेरे चडेगा तेमां अमारो दावों नहीं।"

(स) सम्वत् 1876 पोस सुदी 1 को एक कागज नगरसेठ वेणीदासजी विगेरे समस्त जैन श्वेताम्बरी पंचों के नाम भण्डारी दलीचंद का लिखा हुवा है जिससे भी सिद्ध होता है कि कदीम से नौकर चाकर कामदार ने भेज कर वही बांटकर अधिकारी जैन श्वेताम्बर पंचों का है।

(द) आदेश नंबर 8 जो ऊपर छपा है उस के जवाब में संवत् 1906 वैशाख सुदी में भण्डारी वगेराहने दीवान साहब के नाम उत्तर लिख भेजा जिसकी छट्ठी बिंदु में लिखा है कि "सेठजी व पंचों का केवा माफिक चालांगा।"

(य) संवत् 1921 भादवा विद 4 को भण्डारी जवानजी आदमजी ने शाह हुक्मीचंदजी बाफणा के नाम लिखा जिस में दरज किया है कि "अठे कदीम से मालकी आपकी है" ऊपर दरज की हुई सिबूतें श्वेताम्बर समाज के हकूक में कितनी मजबूत है सो पाठक स्वयं सोच लें। इस के सिवाय उदयपुर–मेवाड़–राज्य की कृपा जैन समाज पर असीम रहती आई है जिसके कई उदाहरण प्राप्त हो सकते है। राज्य की कृपा का कुछ अंश हम पाठकों के सामने रखना चाहते है, सो नीचे लिखे परवाने पढने से विदित होगा।

"हीरबीजेसुर (हीरविजयसूरि) जैन श्वेताम्बर के आचार्य गुजरात के मंदिरों में परमेश्वर की भक्ति करते हैं। इनको मेरे पास बुलाया और इनसे मुलाकात से मैं बहुत खुश हुआ। उस के बाद इन्होंने अपने वतन में जताते वख्त अर्ज की है –

जो गरीबपरवर की राज पर हुक्म होना चाहिये कि सिद्धाचल जी, गिरनार जी, तारंगा जी, केसरिया जी और आबू के पहाड़ जो गुजरात में है तथा राजगिरी के पांचों पहाड़ तथा समेतशिखरजी उर्फे पार्श्वनाथजी जो बंगाल के मुल्क में है, वह और पहाडों के नीचे (तलेटा) तमाम मन्दिर की कोठियां तथा तमाम भक्ति करने की जगह तथा तीर्थ की जगह जो जैन श्वेताम्बर धर्म की तमाम मेरे मुल्क में जिस जगह जो हजारे कब्जे की है, उन पहाड़ों तथा मन्दिर की आसपास कोई आदमी जानवर नहीं मारे।

यह तमाम पहाड़ और पूजा की जगह बहुत मुद्दत से जैन श्वेताम्बर धर्म की है। इसलिये इनकी अर्ज मंजूर की गई। यह तमाम पूजा की जगह हीरबीजेसुर जैन श्वेताम्बर आचार्य को दे दी गई है..... वगैरह।"

अकबर बादशाह ने यह दस्तावेज संवत् 1635 में जैनाचार्यजी को लिख दी जिन की पूरी

नकल "कृपारस कोष" व "सूरीश्वर और सम्राट" नाम की पुस्तकों में छपी है और यह परवाना श्रीमान् सिद्धिचन्द्रजी भानूचन्द्रजी जो आचार्य श्री हीरविजयसूरिजी के शिष्य थे और बादशाह ने आपको "खुशफहम" की पदवी दी थी व इनके चरण तीर्थ श्री केसरियानाथ जी में मरुदेवी जी के पास ही स्थापित है, इनके साथ आचार्य महाराज के पास परवाना भेजा था। जिसका सबूत कृपारस कोष पृष्ठ 39 पर छपा है और मूल ग्रन्थ पृष्ठ 21 पर उल्लेख है कि –

"यज्जीजिया आकर निवारण मेषचक्रेया चैत्य मुक्तिरपि दुर्दममुद्ग लेभ्यः ।
यद्द्वन्दिबन्धनमपा कुरुते कृपांगो यत्सत्करो त्यवमराजगणो यतीन्द्रान् ।।126।।"

य जन्तु जातमभयं प्रतिमा सषट्कं यच्चाज निष्टविभयः सुरभीसमूहः इत्यादि शामनमनुनतिकारणेषु ग्रंथोऽयमेव भवतिस्म परं निमित्तम् ।।127।।

बिल्कुल साफ बात है कि उक्त कथन व लेख से भी यह तीर्थ श्वेताम्बर समाज का ही साबित होता है और अकबर ने परवाना लिख सूरिजी महाराज के पास भेजा जिसका हल धीरवीर शिरामणि महाराणाधिराज प्रतापसिंहजी को मालूम होने पर आपने अनुमोदनापूर्ण एक परवाना सूरिजी महाराज के नाम लिख भेजा था, जिसका नकल भी पाठकों के सामने है। देखिये महाराणा प्रताप का पत्र –

"स्वस्ति श्री मगसूदा नगर महाशुभस्थाने सरव ओपमालायक भट्टारक महाराज श्री हीरविजय सूरिजी चरणकमलायएण स्वस्ति श्रीविजय कटक चांवड म.....श सुथाने महाराणाधीराज श्रीराणा परताबसिंहजी ली. पगेलागणों बंचसी अठारा समाचार भला है आपरा सदा भला चाहिजे आप बडा है पुजनीक है सदा करपा राखे जीसुं शेष्ठ रखावेगा अप्रंच आपरो पत्र अणां दिना मांही आयो नहीं सो करपा कर लिखावेगा श्री बड़ा हजूर के वखत पधारवो हुवो जींसमे अठा सुं पाछा पधारतां बादशाह अकबर जीने जैनाबाद में ग्यानरों प्रतिबोध दीदी जीरो चमत्कार मोटो बतायो जीवहिंसा चुरखलो तथा पंखेरु की वेती सो माफ कराई जीरो मोटो उपकार कीदो सो श्री जैनरा गर में आप अस्याहीज (उद्योत) उद्योतकारी अबार इसमे देखतां आपजुं फँरवे नहीं आखी पुरव हिन्दुस्थान अंतरवेद गुजरात सुदां चारों ही देशा में धरमरो बडो उद्धोत (उद्योत) कर देखाणों जठा पाछे आप को पधारणों हुवो नहीं सो कारण कंइ–वेगा माफीक आपरे है जी माफीक बोल मुरजाद सामा आवारी कसर पडी सुणी सो काम कारण लेखे भुल रही वेगा जींरो अंदेसो नीं जाणेगा. आगासुं श्री हेमाचारजजीने श्रीराज महेमान्या है जीरो पटो कर देवाणोजी माफीक मान्या जावेगा श्री हेमाचारजजी पेली श्रीबडगछरा भट्टारकजी ने बडा कारण सुँ राज महें मान्या जी माफीक आपने आपरा पगरा गादी उपर पाटवी तपगच्छराने मान्या जावेगा इ सिवाय देश में आपरा गछरो देवरों तथा उपासरो वेगा जीरी मुरजाद रीराज सिवाय दुजा गछरा भट्टारक आवेगा सो राखेगा श्रीसमरण

ध्यान देव जातरा करे जठे याद करावसी परवानगी पंचोली गोरो सं. 1635 वरसे आसोज सुदी 5 गुरुवार।"

1) महाराणा कुम्भा का पत्र

स्वस्ति श्री एकलिंगजी परसादातु सही राजाधीराज महाराणाजी श्री कूंभाजी आदे सातु मेदपाटरा उमराव थोबांदार कामदार समस्त महाजन पंच कस्य अप्रंच

आपणे अठे श्री पुज तपागच्छ का तो देवेन्द्रसूरिजी का पग का तथा पुनम्या गच्छ का हेमाचारजजी को प्रमोद है धर्मज्ञान बतियो सो अठे अणां का पग को होवेगा जण्यी ने मानांगा पुजांगा परथम तो आगे सुंइ आपणे गढ कोट में नीम दे जद पेलां श्री रीखवदेवजीरा जो याने तोडेगा वीने राम पुगेगा.....

देवरारी नीमदेवाडे है पुजा करे है अबे अजुं ही मानांगा .....धरम मुरजाद में जीव राखणो या मुरजाद लोपेगा जणीने ..... की आण है ओर फेल करेगा जणीने तालाक है। सं. 1421 काती सुदी 5

2) महाराणा राजसिंह का पत्र

महाराणा श्री राजसिंह जी को हुक्म है. मेवाड रा दश शेष (गामरा) सरदारा परधाना पटेल पटवार्यां आप आपरा दरजा मुजब वांचज्यों, कदीम जमाना सुं जैनीलोगारां मंदिर व इमारते गरां को अख्त्यार है इं वास्ते कोई वणाँरी हदां में मारवा ताबे जानवरां ने ले जावे नहीं यो यांरो पुराणों हक्क है। कोई जीव मनुष्य तथा पशु मारया जावा की गरज सुं वांरे रेवास के पास लेकर निकले वो अमरयो हे राजरा हरामखोर तथा लुटेरा तथा बदमास जी केद सुँ भाग्या होवे और वीभाग कर यातियांरा उपासरा महें सरणों लेवे तो वाने राजरा नोकर वठे पकडेगा नही यो हुकम वांचने..... यतियांने कोई सतावे नही परंतु यारां हकुक कायम राखे।

3) महाराणा भीम सिंह का पत्र

स्वस्ति श्री पाटनगर महाशुभस्थाने सरब ओपमा लायक भट्टारकजी महाराज श्री विजेजिणेंद्रसूरिजी चरण कमलायेण स्वस्ति श्री उदयपुर सुथिने महाराजाधिराज महाराणा श्री भीमसिंहजी लिखावतां पगे लागणों बंचावसी अझा का समाचार भला है राजरा सदा भला चाहिजे राज बडा हो पुज्य हो सदा कृपा सुदृष्टि रखावे जणी थी विसेस रखावसी अप्रंच।

अणां दिना में कागद समाचार नहीं सो करपा कर लिखावसी और आपरा दरसन की गणी ओलुं आवे है कृपा कर पधारो तो मंहे चंपाबाग सुधी सामां आयने आपे शहर मंहे पदरावां सदा आपरी भेट मुरजाद मारा गुरुकांकरोली श्रीगुसांइजी हे ज्युं आपरी है अणी में तफावत है नही ओर दुजा गछरा भट्टारक तो हे ज्यांरी राह मुरजाद तो माजनारी हे वांरा सरावगांरी हे ने

आपरी राह मुरजाद तो मांरा बडारा बांदी है सो.....

.... कांकरोली थी सीवाय मेर मुरजाद राखेगा ज्यादा कंइ लिखां आप बडा हो गुरु दयाल हो अठे वेगा पदार दरसण वेगा देगा अइा लायक कामकाज वे सो लिखेगा चावे सो मंगावेगा अठे तो आपरा हुक्मरी बात हे आगे ही छांगीर चमरां मोरछबां पालखी संज सुदी छडी दुसालों आपरी मुरजाद ठेठथी सो पण मंहे उठे पुगायो सो..... हुवो हो अंजु आप फरमावों ने लिखो जतरुं ओजुं ही नीजर मेलुं दुजा थगी तफावत जाणेगा नही श्री इष्टदेव सेवा पूजा ध्यान समरण वेलां माने याद करेगा आपरी यादगीरी थी मांरे कल्याण वेगा वा पडतो कागद समाचार किरपा कर ..... सं. 1874 वरसे काती विदी 14 सनेसर,

4) सही भालो :

स्वस्ति श्री उदेपुर सुथाने महाराजाधिराज महाराणा श्री भीमसिंहजी आदे सातु मेवाड़ रा पटायेत सरदार जागीरदार समसथ गामरा महाजना कस्य अप्रंच मेवाड री सीमा में तपागच्छरा श्री पुज बीजेजिणेंद्रसूरिजी रा आदेस उथापे ने तो बेठा रहे तथा कोइ जागीरदार महाजन राखे सो अग्या बना राखवा पावे नहीं अतरा दन रया सो देस दंगा कराया अबे कोइ जबरी सुं रहेगा तथा कोइ राखेगा जणीतीरां थी गुनेगारी लेवायगा ओर गछरी जती गेरवाजबी केवत करेगा नही सदा मरजाद माफक चाल्या जावेगा – परवागनी पंचोली रामकरण सं. 1883 वरसे जेठ सुदी 13 सुकरे।

5) भालो सही – महाराणा सरूपसिंह जी का पत्र

स्वस्ति श्री उदयपुर शुभ सुथाने महाराजाधिराज महाराणाजी श्री सरुपसिंहजी आदेसातु मेवाड रा सरदारां जागीरदारां और समसथ गामरा महाजना कस्य अप्रंच मेवाडरी सीम मंहे तपागछरा श्री पुजजी विजय देवेंद्रसूरिजीरो आदेस उथपे ने जती बेठ रहे तथा कोइ जागीरदार महाजन राखे सो आग्या बनां रखवा पावे नही न कोइ जबरीसुँ रहे तथा राखेगा जणी तीरांसु गुनेगारी लेवायगा ओर तीरथ की परतेसटा माल उठव उपधान सदा बंद आगेसुं होवे हे वो वेगा जुनी मरजादा मटेगा नहीं, और इं गच्छारो गेरवाजबी केवल करेगा नहीं, सदा मुरजाद माफक चाल्या जावेगा परवानगी महेता सेरसिंहजी सं. 1905 वरसे मंगसर विद 7 सुकरे।

6) स्वस्ति श्री जसनगर सुथाने महाराजाधिराज महाराणा श्री जेसींघजी आदेशातु साह सुरताण तथा साह सुरजमल समस्त महाजना कस्य अप्रंच पजुसण मांहे सदा ही अगतो दुटे हे सो छुटवारो हुक्म हुवो हे परवानगी साह जसो सं. 1750 वरसे भादवा वद 13 सुकरे.

7) महाराणा सज्जनसिंह जी का पत्र :

स्वस्ति श्री अहमदनगरे शुभसथाने सरव ओपमा लायक भट्टारक श्री विजेयधरणेंद्रसूरिजी एतान स्वस्ति श्रीउदेपुर शुभसथाने महाराजाधिराज महाराणाजी श्री सजनसिंहजी लीखावतां पगे लागणे बांचसी अठारा समीचार श्री..... जी की कृपासुं भला हे राजरा सदा भला चाहिजे राजपुज्य हो अप्रंच राज की श्री ऋषभदेवजी की तरफ पधारवा की मालुम हुइ जींसु लीखवो हे के अबर के चातुरमास अठे ही पधार करेगा पत्र समाचार लिखबो करेगा संवतृ 1934 जेठ वदी 9 सने.

8) महाराणा फतेहसिंह जी का पत्र :

स्वस्ति श्री भीनमाल सुथाने सर्व ओपमा भट्टारक श्री विजयराजसूरिजी एतान स्वस्ति श्रीमत उदेपुर सुस्थाने महाराजाधिराज महाराणाजी श्री फतेहसिंहजी लीखावतां पगे लागणों बंचसी अठारा समाचार श्री ..... जी की कृपासुं भला हे राजरा सदा भला चाहीजे राजपुज हो अप्रंच पत्र आप को आयो समाचार बांच्या दुपडो भेज्यो सो नजर हुवों पत्र समाचार लिखबो करेगा सं. 1941 जेठ सुदी 9 सुकरे

श्री जैन दादावाड़ी (केसरिया जी तीर्थ) ऋषभदेव

(श्री अभयदेव सूरि, श्री जिनदत्त सूरि, श्री मणिधारी श्री जिनचन्द्र सूरि, जिन कुशल सूरि)

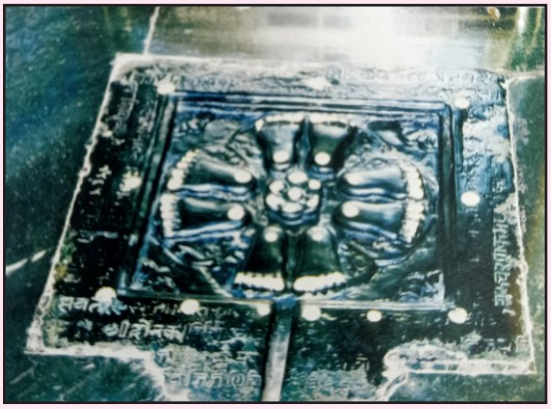

यह दादावाड़ी श्री केसरियाजी तीर्थ मंदिर जाने के द्वितीय दरवाजा से बाहर निकलते समय दाईं ओर मुख्य बाजार के किनारे स्थित है। इस मंदिर परिसर के चारों ओर चार दीवारी बनी हुई है और चारों ओर फाटक (दरवाजे) लगे हुए है। कहा जाता है कि मंदिर की भूमि अधिक थी लेकिन चारों ओर अतिक्रमण हो गया है। वर्तमान में बस स्टेण्ड से भी सीधा मार्ग बना हुआ है। खतरगच्छीय चारों गुरूओं की चरण पादुकायें एक श्याम पाषाण की देवरी में स्थापित है।

श्री जैन दादावाड़ी श्री ऋषभदेव तीर्थ श्री अभयदेव सूरि, श्री जिनदत्त सूरि, मणिधारी श्री जिनचन्द्रसूरि, श्री कुशल सूरि, की चरण पदुकायें श्याम पाषाण की चौकी पर स्थापित है। जिसका आकार 15X13" है। इसके चारों ओर यह लेख है :

संवत् 1912 का मिति फागुन वदि 7 तीर्थौ गुरू वासरे श्री धुलेवानगरे श्री क्षेयकीर्ति शाख्योद्भव महोपाध्याय श्री रामविजय जी गणि शिष्य महोपाध्याय शिवचंद गणि शिष्य चंद्र मुनिना शिष्य मोहनचंद युतेन श्री सत्गुरू चरण कमलानि कारितानि महोत्सव कृत्वा प्रतिष्ठापितानि च वर्तमान श्री वृहर्तखरतर गच्छ भट्टारकाज्ञय श्री अभयदेवसूरि जिनदत्तसूरि जिन चंद्र सूरि श्री जिन कुशल सूरिणां चरणान्यासः

दादावाड़ी की जमीन साढ़े बारह बीघा है, जो बड़े बगीचे के नाम से प्रख्यात है। यह दादावाड़ी कलकत्ता निवासी सेठ राय बहादुर बद्रीदास जी जौहरी ने अपने निजी द्रव्य से जमीन खरीदकर दादावाड़ी बनाई थी। देवस्थान विभाग को एग्रीमेन्ट के साथ व्यवस्था करने हेतु उदरथ सौंपा था, लेकिन विभाग ने वहां अव्यवस्था कर रखी है। लगभग 30 वर्ष पूर्व देवस्थान विभाग ने एमओयू कर श्री केसरियानाथ जी दादावाड़ी समिति को 110X110 फीट नापकर सुपुर्द किया, जो अब भी समिति के पास ही है। समिति ने लगभग 2 लाख की लागत भी इस पर लगाई है। यहां पर वर्षो से श्री भूरीलाल जी पुजारी पूजा करते हैं तथा उनको गुरुदेव के साक्षात दर्शन भी हुए है। इसी कारण उसके पूरे परिवार की श्रद्धा है।

सम्पर्क सूत्र : श्री कीकाभाई प्रेमचन्द ट्रस्ट, ऋषभदेव, फोन : 02907-230536

श्री आदिनाथ भगवान का मंदिर, ऋषभदेव

संचालित : सर कीका भाई प्रेमचंद ट्रस्ट

यह मंदिर ऋषभदेव (केशरियाजी तीर्थ) के सार्वजनिक बस स्टेण्ड से पूर्व की ओर स्थित है। सर कीकाभाई प्रेमचंद महाजन गुजरात प्रांत के रहने वाले थे और केसरियाजी तीर्थ के प्रति विश्वास एवं श्रृद्धा रखने वाले भक्त थे। उनकी कोई भी योजना जो मस्तिष्क में आती उसको केसरियाजी में आकर मनोकामना करते और उनकी मनोकामना पूर्ण हो जाती।

इसी क्रम में उन्होंने अनुभव किया कि मंदिर ट्रस्ट (देवस्थान नियंत्रण वाली) की धर्मशाला में समुचित व्यवस्था नहीं होने से उन्होंने कामना की, इस तीर्थ भूमि पर आगन्तुक यात्रियों के लिये आधुनिकतम रेस्ट हाउस का निर्माण व पूजा पाठ के लिए विशाल मंदिर का निर्माण कराना चाहिए।

उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने भूमि क्रय की लेकिन उनका अकस्मात् निधन हो जाने से वे निर्माण कार्य नहीं करा सके लेकिन उनकी पत्नी लेडी लीलीबेन (अंग्रेजी महिला) ने अपने पति के सभी संकल्पों को योजनाबद्ध तरीके से कार्यान्वित करवाए।

सर्वप्रथम सन् 1958 ईस्वी में चार शयन कक्ष का एक रेस्ट हाउस तैयार करवाया और सन् 1960 में ट्रस्ट बनाकर पंजीकरण करवा लिया। वर्तमान धर्मशाला निर्माण करने में खतरगच्छीय आचार्य श्री कांतिसागर सूरीश्वरजी के प्रमुख शिष्य उपाध्याय श्री मणिप्रभसागर जी का आशीर्वाद प्राप्त है और 100 कमरें निर्मित हो गये है।

इस मंदिर में निम्न प्रतिमाएं एक कमरेनुमा मंदिर में स्थापित है :

1) **श्री आदिनाथ भगवान** की श्याम पाषाण की 41'' ऊँची प्रतिमा है। इस पर लेख है : खरतरगच्छे आचार्य श्री जिनेश्वर सूरि नवांगी वृतिकार अभयदेव सूरि दादा जिनदत्त सूरि दादा मणिधारी जिनचंद्र सूरि दादा जिनकुशलसूरि दादा जिनचंद्र सूरि गणनायक श्री सुखसागर आचार्य श्री जिनकांति सागर सूरिश्वर शिष्येन जहाज मंदिर गजमंदिर के अधिष्ठाता उपाध्याय मणिप्रभसागरेण प्रतिष्ठित रिखभदेव नगरे श्री केशरियाजी तीर्थे अभिनवं केशरिया नाथ बिंब वि.सं. 2058 माघ शुक्ला दशभ्यां शुक्रवासरे मालपुरा तीर्थे री सांचोर जैन श्वेताम्बर खरतरगच्छ श्री संघेन कारापितं। शुभभवतु श्री संघस्य दिनांक 22–02–2002

2) **श्री सुमतिनाथ भगवान की** (मूलनायक के दाएं) श्वेत पाषाण की 21'' ऊँची प्रतिमा है। इस पर लेख है : श्री खरतरगच्छे आचार्य श्री कांतिसागर सूरि शिष्य उपाध्याय श्री मणिप्रभ सागरेण प्रतिष्ठितं कारापितं श्री सुमतिनाथ बिंब सं. 2058 माघ शुक्ला 10 शुक्रवासरे मालपुरा तीर्थे श्री सांचोर तीर्थ।

3) **श्री पद्भ प्रभ स्वामी** की (मूलनायक के दाएं) श्वेत पाषाण की 21'' ऊँची प्रतिमा है। इस पर लेख है : श्री खरतरगच्छे आचार्य श्री जिनकांतिसागरसूरि शिष्य उपाध्याय श्री मणिप्रभ सागरेण प्रतिष्ठितं रिषभदेव नगरे श्री केसरियाजी तीर्थ श्री पद्मप्रभ स्वामी बिंब वि.सं. 2058 माघ शुक्ला दशम्या शुक्रवासरे मालपुरातीर्थ श्री सांचोर जैन श्वेताम्बर खरतरगच्छ श्री संघस्य" पश्चिमी दीवार के आलिए में

4) **श्री जिनदत्तसूरि** की श्वेत पाषाण की 15'' ऊँची प्रतिमा है। इस पर लेख है:

"श्री खतरगच्छे आचार्य श्री जिनकांतिसागरसूरि शिष्य उपाध्याय श्री मणिप्रभ सागरेण प्रतिष्ठितं रिषभदेव नगरे श्री केसरियाजी तीर्थ श्री दादा जिनदत्तसूरि मूर्तिः सं. 2058 माघ शुक्ला दशम्यां पासुभाई शाह नि. इन्दौर"

पूर्वी दीवार के एक आलिए में–"श्री नाकोड़ा भैरवः की पीत पाषाण की 19'' ऊँची प्रतिमा है। इस पर यह लेख है : श्री नाकोड़ा भैरव श्री मूलचंद छोगालाल जी सांचौर निवासी पारसमल रमादेवी ।

उत्थापित चल प्रतिमाएं (धातु की)

1) **श्री शीतलनाथ भगवान** की 8'' ऊँची प्रतिमा है। इस पर लेख है :

"वि.सं. 2049 माघ शु. 13 सांचोर नगरे गणि मणिप्रभ सागरेण खरतरगच्छे प्रति. श्री शीतल तिजन बिंब प्यारीबेन भगवानदासजी मालूरामसर निवासी कारापितं"

2) **श्री वासुपूज्य भगवान** की 8'' ऊँची प्रतिमा है। इस पर लेख है :

"वि.सं. 2049 माघ शु. 13 सांचोर नगरे गणि मणिप्रभ सागरेण खरतरगच्छे प्रति. श्री वासुपूज्य बिंब मुनीबेन मूंगराज जी बेसडिया परि. कारापितं "

3) **श्री धर्मनाथ भगवान** की 8'' ऊँची प्रतिमा है। इस पर लेख है :

"वि.सं. 2049 माघ शु. 13 सांचोर नगरे गणि मणिप्रभ सागरेण खरतरगच्छे प्रति. श्री धर्मनाथ बिंब जमनाबेन श्री सोमराज जी बेसडिया परि. कारापितं"

4) **श्री सिद्धचक्र यंत्र गोलाकार** 4'' ऊँची आकार का है। इस पर लेख है : श्री कांतिसागर जी मणिप्रभ सागर जी के उपदेश से वि.सं. सप्रेम भेंट बाड़मेर (राज)

5) **श्री महावीर भगवान** की प्रतिमा है। इस पर लेख है : श्री महावीर बिंब जैन खरतगच्छे संघेन कारापितं।

निर्माणाधीन योजना :

1) **गज मंदिर :** 18 विशाल (श्वेत पाषाण के) हाथी का कार्य प्रगति पर है।

2) श्री जिनदत्तसूरि, जिनचंद्रसूरि जिनकुशलसूरि, जिनचंद्र सूरि जी की दादावाड़ी, भूतल पर।

इस सभी प्रकार के कार्य की देखरेख सर कीकाभाई प्रेमचंद ट्रस्ट मंडल द्वारा की जा रही है।

वार्षिक ध्वजा ज्येष्ठ शुक्ला 14 को चढ़ाई जाती है।

सम्पर्क सूत्र :

अध्यक्ष : श्री बाबुलाल बोहरा, मोबाईल : 98671 56699

महासचिव : श्री गजेन्द्र भन्साली, मोबाईल : 94141 66391

कार्यालय ऋषभदेव : फोन : 02907–230536

श्री आदिनाथ (ऋषभदेव) भगवान का मंदिर, केसरियाजी

संचालित : (पट्टशाला जैन मंदिर केसरिया जी)

यह शिखरबंद मंदिर धुलेवा नगर (केसरियाजी) पगलिया तीर्थस्थल के पास भूमि सतह से ऊँचाई पर स्थित है। इस मंदिर को बनाने के लिए श्री पूनमचंद चन्द्रभान सिंघवी निवासी तखतगढ़ ने सन् 1975 में भूमि क्रय की और करीब 20 वर्ष बाद मंदिर निर्माण कार्य प्रारम्भ कर मंदिर निर्मित हो जाने पर संवत 2058 फाल्गुन कृष्णा 5 को प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई।

निर्माता की मूर्तियाँ मंदिर में प्रवेश करते समय दोनों ओर स्थापित है। केसरियाजी तीर्थ परिसर में स्थापित श्री जगवल्लभ पार्श्वनाथ भगवान के मंदिर के सभामण्डप में विभिन्न तीर्थस्थलों के पट्ट लगाने का प्रस्ताव था लेकिन तीर्थ विवार होने से प्रस्ताव कार्यान्वित नहीं हो सका।

उस राशि को सुरक्षित रख दिया गया जो वर्ष व्यतीत होने पर बढ़ती गई तथा उस राशि का उपयोग मंदिर का निर्माण करने में लिया गया। इस मंदिर को बनवाने का निर्णय उस समय लिया गया जबकि केसरिया जी तीर्थ में आवाजाही कम हो गई थी और अव्यवस्था फैली हुई थी, इसलिये तीर्थ के दर्शन के लिए मूल मंदिर बनाने का संकल्प लिया।

मंदिर निर्माण करने के लिए आचार्य श्री हेमचन्दसूरि जी व आचार्य श्री जितेन्द्रसूरि जी महाराज के सदुपदेश व महाराज श्री सत्वभूषण वि. जी महाराज सा. की प्रेरणा से निर्मित हुआ।

इस मंदिर में निम्न प्रतिमाएं स्थापित है :

1. श्री ऋषभदेव भगवान (मूलनायक) :

श्री ऋषभदेव भगवान (मूलनायक) की श्याम पाषाण की 41'' ऊँची प्रतिमा है। प्रतिमा के पीछे पंच तीर्थी परिसर बना हुआ है, इस पर लेख है :

"विक्रम संवत 2058 फाल्गुन वदि 5 रविवारे धुलेवा नूतन श्री केशरिया नाथ (ऋषभदेव) बिंब प्रतिष्ठितं तपोगच्छीय विजय प्रेमसूरि भुवनभानु सूरि पट्टधर विजय जयघोष सूरि आ.वि. जितेन्द्रसूरि भ्याः महामहोत्सव पूर्वक कारितंः" व वैरागकय देशनादक्ष प.पू. आ. हेमचन्द सूरिश्य शिष्य गणि री अपराजित वि. शिष्य मुनि सत्वभुषण वि. साध्वी श्री सिद्धिकृपा, जिनकृपा वीरकृपा यशक्रिया श्री प्रेरणायां कांतिलाल रूकमणि बेन विजयराज कलाबेन, रमेश कुमार मधुबेन जयपाल निशा पूरण वीणा, संगीता हेमन्त लीना विपिन दिवेश इशान चिराग प्रत्युष जयलि स्व. हीराचन्द मधुमसु स्व. गुणवंती लता रेखा राकेश ऋतु अशीता दीपा रूचिता

प्रांजल नुपुर बेटा–पोता पौत्री प्रपौत्री स्व. श्री केशरीचन्द जी जडावी बाई (धापुबाई) पुनमचंद जी दौलीबाई चन्द्रभान जी जोधीबाई जयरूपजी संघवी परिवारेण तख्तगढ़ (राज.) केशरीमल कान्तिलाल मुम्बई दुकान वि.सं. 2058, 3–3–2002 यह प्रतिमा आकर्षक एवं चमत्कारी है और इससे वर्ष में कई बार अमीझर प्राप्त होता है।

2. श्री सुविधिनाथ भगवान :

श्री सुविधिनाथ भगवान की (मूलनायक के दाएं) श्वेत पाषाण की 25" ऊँची प्रतिमा है। इस पर लेख है :

वि.सं. 2058 फाल्गुन वदि 5 धुलेवा नगर श्री सुविधिनाथ जिन बिंब इदं प्रतिष्ठितं तपा. आ. विजय प्रेमसूरि भुवनभानुसूरि पट्टे अ.वि. जयघोष सूरि आ. विजय जितेन्द्रसूरिश्यः महा महोत्सव पूर्वक कारितं स्व. गुणवंती बेन रणजीतकुमार जी सुपुत्री हिमानी पलक इति बेटा पोत्र–पोत्री ताराचंद जी संघवी लाडबाई राज. कुन्दनमल अमृतीबेन बेटा निहालचंद कुण्डल गौत्र परमार ।"

3. श्री महावीर भगवान :

श्री महावीर भगवान (मूलनायक के बाएं) श्वेत पाषाण की 25" ऊँची प्रतिमा है। इस पर लेख है :

वि.सं. 2058 फालगुन वदि 5 धुलेवा नगर श्री महावीर स्वामी बिंब इदं प्रतिष्ठितं धूलेवानगरे प्रसिद्ध केशरियाजी तीर्थ नूतन जिनालय बिंब प्रतिष्ठितं तपोगच्छीय श्री प्रेमसूरीश्वर जी भुवनभानुसूरीश्वर पट्टधर वि. जयघोष सूरि आ. विजय जितेन्द्रसूरिश्यः महामहोत्सव पूर्वक कारितं च. श्री शांतिलाल फूलचन्दजी महेन्द्रकुमार निलेश हितेश पीयूष कुणाल बेटा–पोता सा. फूलचंदजी पूनमचन्दजी परिवार।

उत्थापित चल प्रतिमाएं (धातु की)

1. श्री पार्श्वनाथ भगवान की 9" ऊँची प्रतिमा है। इस पर समय का लेख नहीं होकर अन्य लेख है।

2–3. श्री जिनेश्वर भगवान की प्रतिमा विराजमान है।

4. श्री पार्श्वनाथ भगवान की 9" ऊँची प्रतिमा है। इस पर 2058 फाल्गुन वदि 5 का लेख है।

5. श्री मुनिसुव्रत स्वामी की 9" ऊँची प्रतिमा है। इस पर 2058 का लेख है।

6. श्री आदिनाथ भगवान की 14" ऊँची प्रतिमा है। इस पर 2058 फाल्गुन वदि 5 का लेख है।

7. श्री सिद्धचक्र यंत्र गोलाकार 7" आकार का है। इस पर श्रीमती कुंतीबाई का लेख है।

8. श्री अष्टमंगल यंत्र 6"x3.5" का है। इस पर श्री कांतिलाल जी ..... का लेख है।

9–12 श्री जिनेश्वर भगवान की 5" ऊँची चार प्रतिमाएं है। इन सभी प्रतिमाओं का समसरण बना है। लेख लांछन स्पष्ट नहीं है।

13. श्री चतुर्विंशति 14" ऊँची प्रतिमा है। इस पर वि.सं. 2058 फाल्गुन कृष्ण सोमवार का लेख है। वेदी पर पबासन देवी 6" ऊँची प्रतिमा एक आलिए में स्थापित है।

जिन मंदिर में बाहर निकलते समय दाहिनी ओर एक आलिए में :

श्री गौमुख यक्ष की श्वेत पाषाण की 17" ऊँची प्रतिमा है। इसके नीचे लेख पर पेन्ट लग जाने से दब गया है, इसके नीचे यह लेख है :

"वि.सं. 2058 फाल्गुन वदि 5 श्री धुलेवानगरे श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथ जिन बिंब इदं प्रतिष्ठितं तपा. आ. विजय प्रेमसूरीश्वर भुवनभानु सूरीश्वर पट्ट आ. विजय जयघोषसूरि आ. वि. जितेन्द्रसूरिभ्या महामहोत्सव पूर्वक कारितं च बाकली निवासी कोठारी मृगराज भार्या मूलीबेन श्रेयोर्थ पुत्र भंवरलाल भार्या विमलादेवी पुत्र पुष्प अम्बाति सरितादेवी"

सभामण्डप के बाईं ओर :

श्री नाकोड़ा पार्श्वनाथ भगवान की श्वेत पाषाण की 21" ऊँची व सर्प के छत्र तक 25" ऊँची है। इस पर लेख है :

वि.सं. 2058 फाल्गुन कृष्णा 5 रविवारे

श्री नाकोड़ा पार्श्वनाथ जिन बिंब इदं प्रतिष्ठितं तपा. आ. विजय प्रेमसूरि भुवन भानुसूरि पट्ट आ. वि. जयघोषसूरि आ. वि. जितेन्द्रसूरिभ्या महामहोत्सव पूर्वक कारित च राकेशकुमार मीनाखी बेन प्रतीक हर्षील बेटा–पौता प्रपौत्र स्व. श्री गोर्धनलाल श्री चन्द्रकान्ता ब्रजलाल जी गुलाबबाई पुनमचंद जी लक्ष्मीदेवी नवलचंद श्री ऋषभदेव (राज.) कन्हैयालाल कमलादेवी जमाई राजकुमार जी

मंदिर में प्रवेश करते समय बाई ओर :

श्री नाकोड़ा भैरवः की पीत पाषाण की 17" ऊँची प्रतिमा है। इसके नीचे यह लेख है :

धूलेवानगरे श्री नाकोड़ा भैरव मूर्ति प्रतिष्ठितं तपा. आ. विजय प्रेमसूरि भुवनभानुसूरि पट्टे आ. वि. जयघोषसूरि आ. वि. जितेन्द्रसूरिभ्याः कारितं च रामुतमल कुंदनमल मुकेश निकेश संजय विपिन ऋषभ मालव शाश्वत बेआ पोता सूरजमल जी निवासी ताना (राज.)

श्री नाकोड़ा भैरवः की मूर्ति चमत्कारी है। आरती के समय प्रतिमा के ऊपर का छत्र हिलता दिखाई देता है। कई बार डमरू व छत्र से कंकू गिरते भी देखा है। दर्शनार्थियों की मनोकामना पूरी होती है।

मंदिर में प्रवेश करते समय दांई ओर :

श्री पद्मावती देवी की श्वेत पाषाण की 17" ऊँची प्रतिमा है। इसके नीचे यह लेख है :

श्री पद्मावती देवी मूर्ति प्रतिष्ठितं तपा. आ. विजय प्रेमसूरि भुवनभानुसूरि पट्टे आ. वि. जयघोषसूरि आ.वि. जिततेन्द्रसूरिभ्याः कारितं च भंवरलाल जी पुष्पत साहिल आर्यन विमलादेवी हीराबेन पिंकी सोनल बेटा–पोता मगराज जी हजारीमल जी कोठारी बाकली सं. 2058 फाल्गुन कृष्ण 5 सभा मण्डप में श्री सम्मेदशिखर गिरनार जी सिद्धाचल जी के पट्ट लगे है।

परिक्रमा क्षेत्र में जाते समय बाई ओर सामने एक देवरी में पादुका चौकी 21"x19" गोलाई के आकार पर पादुका स्थापित है। इसके ऊपर श्री आदिनाथ भगवान की श्वेत पाषाण की 29" ऊँची खड़ी प्रतिमा व श्री श्रेयांस राजा की श्वेत पाषाण की 28" ऊँची खड़ी प्रतिमा है।

श्रेयांस राजा भगवान को इक्षु रस का पारणा कराने का दृश्य है। इनके नीचे पट्टशाला जैन श्वेताम्बर जैन मंदिर केशरियाजी उत्कीर्ण है। दोनों ओर की दीवार समवसरण व अष्टापद जी के पट्ट बने हैं।

परिक्रमा में दांई ओर (देवरी में) :

श्री पुण्डरीक स्वामी की श्वेत पाषाण की 20" ऊँची प्रतिमा है। इस पर लेख है। श्री केशरिया जी तीर्थ धुलेवानगरे पट्टशाला मंदिर श्री पुण्डरीक गणधरे बिंबं मिदं प्रतिष्ठितं वि.सं. 2063 फाल्गुन वदि 5 बुधवारेतपा. आ. श्री भुवन भानु सूरि पट्टालंकार जय घोष सूरि आ. हेमचन्द्र सूरि शिष्य प्रशिष्य प पू. प अपराजित विजय म. मु सत्वभूषण विजय म. प.पू.आ. जितेन्द्र सूरि शिष्य प्रशिष्य निपुणरत्न वि. म.मु राज वि.म. आदिभिः प्रतिष्ठित कोठारी मानमल्लेन भार्या मंजुला पुत्र सुरेशचन्द, पुत्रवधु

विशेषण :

सभी प्रतिमाओं के पीछे स्वर्ण रेखाओं में रेखांकित पछवाई बनी हुई है। जिससे प्रतिमाओ एवं मंदिर की सुंदरता बढ़ गई है व प्रतिमाएं आकर्षक दिखाई देती हैं।

इस मंदिर की वार्षिक ध्वजा फाल्गुन कृष्णा 5 को चढ़ाई जाती है।

इस मंदिर की देखरेख स्थानीय स्तर से श्री राकेश जी मलासिया करते हैं।

मोबाईल : 94149 76483

मुम्बई सम्पर्क सूत्र : श्री कांतिलाल संघवी, फोन : 022-23737877

श्री ऋषभदेव भगवान के चरण–पादुका मंदिर, ऋषभदेव

यह मंदिर ऋषभदेव बस स्टेण्ड से पूर्व की ओर 1 किलोमीटर दूरी पर स्थित है। इस चरण–पादुका के दर्शन करने के लिए सीढियां चढ़कर जाना होता है। यह चरण–पादुका एक देवरी में श्याम पाषाण की पट्टी पर स्थापित है। इस पर लेख है :

स्वास्ति श्री संवत् 1873 वर्षे (यह समय खात मुहुर्त का होना चाहिए जबकि प्रतिष्ठा वि.सं. 1884 को सम्पन्न हुई) शाके 1739 प्रवर्तमाने मासोत्ममासे शुभकारी ज्येष्ठं मासे शुक्ल पक्षे चतुर्दशि तिथों गुरुवासरे उपकेश ज्ञातीय वृद्धिशाखायां कोष्टागार गौत्रे श्रावक पुन्य प्रभावक श्री देवगुरू भक्तिकारक श्री जिनाज्ञा प्रतिपालक शाह शंभुदास तत्पुत्र शवलाल अबवं विदास तत्पुत्र दौलतराम ऋषभदास श्री उदेपुर वास्तव्य श्री तपागच्छ सकल भट्टारक शिरोमणि भट्टरक श्री श्री विजय जिनेन्द्र सूरिभिः उपदेशात् पं. मोहनविजय श्री धुलेवा नगरे। भण्डारी दलीचंद आंगुछइं'

नोट : श्री भेरूलाल जी दोशी पिता स्व. श्री देवीलाल जी दोशी निवासी उदयपुर की निजी डायरी से यह भी स्पष्ट हुआ है कि ये देवरी दोशी परिवार द्वारा निर्मित की गई है। इसका विवरण भी तत्कालीन पुजारी श्री खूबचन्दजी की बही में पृष्ट संख्या 23 पर अंकित है। छतरी निर्माण में 21000/– रुपये का व्यय होना बताया गया है। श्री भेरूलाल जी दोशी की हस्तलिखित डायरी श्री दलपतसिंह जी दोशी निवासी उदयपुर के पास है।

नीचे उतरते हुए बाई ओर एक मंदिर बना है जिसमें बरगद का पेड़ है जिसका तना फटा हुआ है। कहा जाता है कि श्री ऋषभदेव भगवान की प्रतिमा इसी वृक्ष में से प्रकट हुई और बाद में उसका मंदिर में बिराजमान कर प्रतिष्ठा कराई। इस गर्भ स्थान पर यात्रीगण भावना सहित केसर के छींटे डालकर पूजा करते हैं। वि. सं. 1999 में सियाणा–मारवाड़ के श्वेताम्बर सेठ शाह पूनमचन्द चुन्नीलाल जी ने जिर्णोद्धार करवाया जिससे स्पष्ट है कि इसका मालिकाना हक श्वेताम्बर समाज का रहा है। नीचे उतरते हुए दाईं ओर एक बड़ा सभा भवन बना हुआ है। सामने ही श्री ऋषभदेव भगवान का विशाल चित्र लगा है। यात्रीगण दर्शन करते हैं। यह सभामण्डप तीनों ओर से खुला है, दरवाजे हैं। प्रति वर्ष मंदिर प्रांगण से वरघोड़ा निकलता है और इस स्थान पर विश्राम होता है, पूजा पढ़ाई जाती है और पुनः मंदिर की ओर प्रस्थान करता है। ऐसा भी कहा जाता है कि प्रतिमा को वृक्ष के स्थान से लाकर सर्वप्रथम इसी स्थान पर विश्राम कराया था।

इसकी व्यवस्था देवस्थान विभाग द्वारा की जाती है।

सम्पर्क सूत्र : 0294-2576130

श्री भटेवा पार्श्वनाथ भगवान का तीर्थ, चाणस्मा

यह तीर्थ मेहसाना रोड़ पर मेहसाना मुख्यालय से 15 किलोमीटर दूर। इसमें स्थापित प्रतिमा लगभग 9'' ऊँची बालू (रेत) से बनी हुई है। इसका रंग लाल (कथाई) है। धरेन्द्र पद्मावती माता का परिकर कलायुक्त बालू से बनी हुई है।

जैन साहित्य के अनुसार इस प्रतिमा का इतिहास इस प्रकार है :

चम्पानगरी के राजा प्रजापाल और उनका मंत्री बुद्धिसागर घुड़सवारी के लिए गए और वे घोड़े पर सवार होते ही घोड़े आंधी की तरह दौड़ रहे थे – दोनों (राजा–मंत्री) को भय सता रहा था कि इन घोड़े को क्या हो गया और घोड़े को रोकना भी नहीं आता है।

घोड़े एक जगह बढ़ते जा रहे थे और अचानक रूक गए और दोनों देखने लगे कि दोनों भी पेड़ों की डालियों से बंध गए और घोड़े भी दिखाई न दिए। दोनों खोज के लिए निकल गए, बीच में एक मधुर संगीत की आवाज आ रही है। वे दोनों आवाज की ओर बढ़ने लगे।

आगे चलकर वे देखते हैं, कई जैन मुनि खड़े है और चारों ओर देवता नृत्य कर रहे हैं, तब उन्होंने खोज की तो ज्ञात हुआ कि श्री नरघोष मुनि को केवल ज्ञान हुआ है जिसका समारोह हो रहा था। उस समय यह भी कहा गया कि इसके बाद जब तक प्रार्थना समाप्त न हो जाए तब तक कोई भी अन्न–जल स्वीकार न करे।

राजा भूख–प्यास से दुःखी हो रहा था। उसकी तलाश में घूम रहा था ओर मंत्री उनके घोड़े को ढूँढने के लिए जांच व खोज कर रहे थे। उस समारोह के देवी–देवताओं ने मंत्रीगण से उत्तर दिया कि वे बता देंगे तब तक आप (मंत्री) उसकी एक प्रतिमा बना देवे और मंत्री ने रेत की एक सुंदर व आकर्षक प्रतिमा तैयार कर दी। राजा आया तब उनको उस प्रतिमा का अभिषेक करने को कहा वे आश्चर्य में रह गया कि वह तो बालू की बनी हुई है। मंत्री ने कहा माता पद्मावती से प्रार्थना करें कि इसका मार्ग बतावे। ऐसे में देवी ने प्रकट होकर कहा कि यह भटेवा (भाटा) की हो जाएगी और इसका नाम भटेवा पार्श्वनाथ होगा। तब से इसको भटेवा पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा कहा जाने लगा।

प्रतिमा को लेकर राजा व मंत्री पुनः नगर में लौटे तो राजा ने प्रतिमा के लिए विचार रखे। मंत्री ने अच्छा मंदिर बनवाकर प्रतिमा को विराजमान कराई। तब राजा ने उसको शटर लोहे के किंवाड़ बनवाकर बंद कर दिए। वहां पर यह प्रतिमा 30,000 वर्ष भूगर्भ से रही और बाद के पार्श्व प्रभु के पुत्र राजकुमार ने उसको तुड़वा कर, बनवाकर देवता को सुपुर्द की तब स्वर्ग में यह प्रतिमा 5 लाख 25 हजार लाख वर्ष तक स्वर्ग लोक देवता द्वारा पुजी गई।

इसी तीर्थ में पूर्व में भी 20,000 वर्ष तक रही। उससे इस ग्राम का नाम भद्रावी नगर था। यह मंदिर कम्बोई से 10 किलोमीटर दूर ग्राम के बीच ग्राम में स्थित है। यह इस ग्राम में 14वीं शताब्दी में स्थापित होना पाया जाता। इसके पूर्व यह प्रतिमा ईडर ग्राम के भदुआर के निवासी श्रावक श्री सूरचंद को भूगर्भ से खनन में प्राप्त हुई तत्पश्चात् श्री सूरचंद के यहां हर प्रकार से खुशहाली के वृद्धि हुई। इससे प्रतिशोध के स्वरूप वहां के राजा ने प्रतिमा राजा को देने को कहा, सूरचंद ने पुनः भूगर्भ में रखकर सुरक्षित की।

वीरू श्रीमाली के कुल की वंशावली से ज्ञात होता है कि श्रावक ने अपने ससुराल नरेली ग्राम से जाने का निश्चय किया। श्री अजितसूरिसिंह सूरि जी म.सा. के सदुपदेश से मंदिर का निर्माण कराकर भटेवा पार्श्वनाथ की प्रतिष्ठा वीर सं. 1804 में (वि.सं. 1335) में करवाई थी।

ऐसा भी उल्लेख मिलता है कि चाणस्मा के एक श्रावक श्री रविचंद्र ने यहां मंदिर बनवाकर वि.सं. 1535 में करवाई, यह सम्भव है कि उस समय पूर्ण रूप से जीर्णोद्धार हुआ हो इससे यह सिद्ध होता है कि यह प्रतिमा प्राचीन है और श्रावक सूरचंद भद्र के निवासी होने से भटेवा पार्श्वनाथ नाम से जाना गया है तथा ऐसा भी उल्लेख है कि घटनाक्रम व कालचक्र से यह प्रतिमा भगर्भ में रही तब तत्पश्चात् यह इस सभी कारणों से इस नगर में स्थापित हुई। यह प्रतिमा चमत्कारिक, आकर्षक है।

यहां पर धर्मशाला, भोजनशाला की सुविधा उपलब्ध है।

सम्पर्क सूत्र : चाणस्मा-384220 जिला पाटण (गुजरात), फोन : 0273423296

यह मंदिर 108 पार्श्वनाथ की सूची में सम्मिलित है।

श्री मनमोहन पार्श्वनाथ भगवान का तीर्थ, कम्बोई

यह मेहसाना से 25 किमी दूर ग्राम के मध्य में स्थित है। इस तीर्थ में श्वेत पाषाण की लगभग 31'' ऊँची प्रतिमा है। यह मंदिर वि.सं. के 16 वीं शताब्दी का बना हुआ है एक प्रतिमा पर वि.सं. 1638 का लेख उत्कीर्ण है जिस पर ग्राम कम्बोई उत्कीर्ण है। यह मंदिर 108 पार्श्वनाथ की सूत्री में भी सम्मिलित है। प्रतिमा की विशेषता यह है कि यह महाराजा सम्प्रति द्वारा निर्मित करवाई गई है और मनमोहक एवं आकर्षक है सम्भवतया इसी कारण इसका नाम मनमोहन पार्श्वनाथ रखा गया हो। यहां प्राचीनकाल से फाल्गुन शुक्ला 2 को मेला लगता है। इस मंदिर में कांच की अच्छे से जड़ाई की हुई है। पूर्व में इसका जीर्णोद्धार वि.सं. 2003 में हुआ था, वर्तमान में भी कार्य हो रहा है।

इस मंदिर में धर्मशाला, भोजनशाला की व्यवस्था है, तहसील चाणस्मा (गुज.)

श्री कल्याण पार्श्वनाथ भगवान का तीर्थ, वीसनगर

यह नगर मेहसाना से 25 किलोमीटर व चाणस्मा से लगभग 15 किलोमीटर दूर स्थित है। इस नगर का प्राचीन नाम बड़नगर, आनन्दपुर था। ऐसा कहा जाता है कि अजमेर के राजा विशालदेव ने गुजरात के राजा भीमदेव को युद्ध में पराजित किया। विजय की खुशी में शान्ति के लिए इस नगर का नाम वीसनगर रखा गया है। यह नगर के चारों ओर 10–15 किलोमीटर का क्षेत्र रहा होगा क्योंकि वड़नगर यहां से 15 किलोमीटर दूर है। इसी प्रकार अन्य ग्राम भी इस प्राचीन नाम से जाने जाते थे। 12 वीं शताब्दी में मेहसाना में कल्याण पार्श्वनाथ भगवान का तीर्थ था। इस नगर पर विजय का समय वि.सं. 1080 के लगभग है।

14–15 वीं शताब्दी के लगभग मुस्लिम आक्रमण द्वारा मंदिरों को तोड़ा जाने लगा। कल्याण पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा को सुरक्षित करने मेहसाना के कोड़ी कुवा में डालकर सुरक्षित की। वातावरण शांत होने पर प्रतिमा कुएं से प्रकट हुई। श्रावक निर्णय लेकर इसको वीसनगर लाए। इसलिए मेहसाणा से लाई प्रतिमा को मंदिर के तीसरी मंजिल में स्थापित किया एवं नूतन मंदिर का निर्माण किया। पहली मंजिल में कल्याण पार्श्वनाथ व दुसरी मंजिल में शेषफणा पार्श्वनाथ की मूर्ति स्थापित की। तीसरी मंजिल में श्री गोड़ी जी पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा स्थापित है।

पार्श्वनाथ की परिक्रमा में दोनों ओर बड़ी देवरी में चौबीस तीर्थंकरों की अनेक प्रतिमाएं व्यवस्थित रूप से स्थापित है। इस मंदिर को बनवाकर प्रतिष्ठा सुद 3, संवत 1863 में की । प्रतिमा को स्थापित किया । इस मंदिर की ध्वजा फाल्गुन मास में चढ़ाई जाती है। इस मंदिर के अतिरिक्त छोटे–बड़े पांच मंदिर विद्यमान है।

कल्याण पार्श्वनाथ श्वेत पाषाण की 11''ईंच ऊँची एवं 15'' ईंच चौड़ी प्रतिमा है। इसकी प्रतिष्ठा 1863 फाल्गुन सुदि तीज को सेठ ने कराई। प्राचीनकाल से शत्रुंजय तीर्थ की तलहटी भी मानी गई है। महाराजा भरत ने यहीं से संघ साथ प्रस्ताव किया।

श्री मुनिसुव्रत स्वामी का मंदिर, बड़नगर

यह मंदिर बड़नगर के भोजक मोहल्ला में स्थित है। कहा जाता है कि इसको भोजक समुदाय के सदस्यों ने निर्मित कराया इसलिए इसको भोजक का देरासर कहा जाता है।

इसमें मूलनायक मुनिसुव्रत भगवान श्वेत पाषाण व प्रतिमा के दोनों और भी श्वेत पाषाण की प्रतिमा विराजित है।

यह मंदिर लगभग 300 वर्ष प्राचीन है इस मंदिर की विशेषता है कि इस प्रतिमा के सामने एक चांदी की डिब्बी है उसमें केसरिया जी तीर्थ (मेवाड़) के मूलनायक भगवान के दाहिना अंगूठा रखा हुआ है जिसकी प्रतिष्ठा पंडितवर श्री खेचरदास मणिलाल भोजक द्वारा वैशाख शुक्ला तीज को कराई।

इसका सम्पूर्ण इतिहास यह है कि श्री मूलचन्द जी भोजक जो बड़नगर के रहने वाले थे। वे केसरिया जी तीर्थ में रहकर भक्ति करते थे और वे वापस आए तब भगवान का अंगूठा उनकी झोली में डाल दिया और वे यहां आकर अंगूठे की पूजा करते एवं भक्ति करते थे।

नोट : विस्तृत कहानी केसरिया जी तीर्थ का इतिहास में उल्लेख है।

श्री आदिश्वर भगवान का मंदिर बड़नगर

यह मंदिर उदयपुर से वाया हिम्मतनगर, वीसनगर होते हुए पहुँचे, यह मंदिर 400 किलोमीटर दूर स्थित है तथा ग्राम के बीच बैंक ऑफ बड़ौदा के पास है। इस मंदिर में तलहटी बनी हुई है जहां पर श्री शांतिनाथ, पुण्डरीक स्वामी, आदीश्वर–सीमन्धर स्वामी, महावीर स्वामी पादुका देवरी बनी हुई है।

यह मंदिर रेल्वे स्टेशन से 1 कि.मी. दूर एक छोटी पहाड़ी पर स्थित है। इस नगर का प्राचीन नाम चमत्कारपुर, मदनपुर व आनंदपुर नाम था। जैन ग्रन्थों में इसका नाम हदनगर व आनन्दपुर उल्लेखित है। यह एक बड़ा व धनाढ्य नगर था। यहां पर अनेक जैन मंदिर व बावड़ी आदि भी है। (इसका क्षेत्र पूर्व में पड़ा था।) प्राचीनकाल में यह नगर शत्रुंजय तीर्थ की तलहटी थी और राजा भरत यहां से ही संघ लेकर शत्रुंजय लेकर गए थे।

वि.सं. 523 में परम् आगम ग्रन्थ का कल्पसूत्र श्रावकों के सम्मुख यहां से ही प्रारम्भ हुई थी जो वर्तमान में सभा स्थानों पर होती है। ऐसा कहा जाता है कि कल्पसूत्र की वाचना श्री आचार्य श्री धनेश्वरसूरीश्वर जी म.सा. द्वारा यहां के राजा श्री श्रवसेन के समक्ष समूह के सामने प्रथम बार प्रारम्भ हुई थी। इससे यह सिद्ध होता है कि यह तीर्थ अति प्राचीन है।

वि.सं. 1208 मेंश्री कुमारपाल राजा ने एक बड़ा किला बनाया था जिसके दरवाजे व तोरण विद्यमान है। वि.सं. 1524 में प्रतिष्ठा सोहम जी द्वारा रचित सोम सौभाग्यकाल में इसे वृहदनगर समेला नाम का तालाब का जीवित स्वामी श्री महावीर नाम के मंदिरों का उल्लेख है। सम्भवतया यहां पर अनेकों मंदिरों का निर्माण हुआ होगा।

वर्तमान में केवल पांच मंदिर जिनमें से यह प्राचीन मंदिर इसे चोटे वाला मंदिर कहते है इसका निर्माण सम्प्रति राजा ने करवाया था लेकिन वर्तमान राजा कुमारपाल ने बनवाया।

श्री महावीर भगवान का मंदिर, बड़नगर

बैंक ऑफ बड़ौदा के पास बना आदीश्वर भगवान का मंदिर से 100 मीटर दूर सड़के के किनारे महावीर भगवान का मंदिर जो विशाल क्षेत्र में निर्मित है।

इसके पास ही मणिभद्रवीर, पद्मावती देवी का पृथक से मंदिर है जिसको स्थानीय लोग डेयरी कहते हैं।

यहां का अन्तिम जीर्णोद्धार वि.सं. 1845 में होने का उल्लेख है। इसके साथ ही छोटे–छोटे मंदिर जैसे पद्मावती देवी का भी मंदिर है।

महावीर भगवान का मंदिर भी उसी समय का माना जाता है जिसे हाथीवाला मंदिर कहते हैं।

श्री आदीश्वर भगवान का मंदिर बड़नगर

यह मंदिर नगर से लगते प्राचीन धनाढ्य नगर से रहा है। यह मंदिर प्राचीनकाल में आनन्दपुर तीर्थ का ही भाग था। यहां पर महाजनों की प्रत्येक वर्ष बैठक होती थी तथा आवश्यक निर्णय लिये जाते थे।

यह तीर्थ वि.सं. 1200 में शब्बादी सोलंकी वंश राज्य कुमारपाल द्वारा निर्मित है। इसमें स्थापित प्रतिमाएं बहुत ही आकर्षक सुंदर है। इस पर निर्मित छोटे व पहले तोरण बने हुए है वे इसकी सुन्दरता को बढ़ा देते हैं। इसका सभामण्डप भी बहुत ही सुंदर कारीगरी का है। इसके साथ धर्मशाला, भोजनशाला जुड़ी है।

यहां पर आचार्य श्री सोमचंद्र सूरीश्वर जी ने यहां पर प्रतिष्ठा श्री देवराज द्वारा आयोजित यहां ..... में मुनि सुंदर वाचक को आचार्य पद विभूषित किया था। यहां से श्री देवराज श्रावक ने श्री मुनि उदर सूरि जी की निष्ठा में शत्रुंजय संघ निकाला था।

नागर को यह उत्पति स्थान रहा है। नागर भी जैन धर्मावलम्बी थे जिन्होंने अनेक जैन प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा करवाई और जिनालयों का निर्माण करवाया। जिसका उदाहरण वर्तमान में विद्यमान है जिसको महावीर भगवान के बावन जिनालय की देवसूरी पर देखने को मिलते हैं।

सम्पर्क सूत्र : 027–222337

श्री चन्द्रप्रभ भगवान का तीर्थ, मोती सिन्दूर

यह तीर्थ शंखेश्वर तीर्थ से लगभग 14 कि. मी. दूर मेहसाना सड़क पर स्थित है। इसमें श्री चन्द्रप्रभ भगवान की श्वेत प्रतिमा विराजमान है। ऐसा कहा जाता है कि यह प्रतिमा पूर्व में पास में ही छोटे मंदिर में विराजित थी।

लगभग 20 वर्ष पूर्व नूतन मंदिर बनवा कर इस मंदिर में विराजमान कर पुनः प्रतिष्ठा कराई।

ऐसा भी कहा जाता है कि यह प्रतिमा 2400 वर्ष प्राचीन है, देखने पर भी यह बनावट के आधार पर सही प्रतीत होती है।

सम्राट अकबर द्वारा लिखित आदेश की प्रति

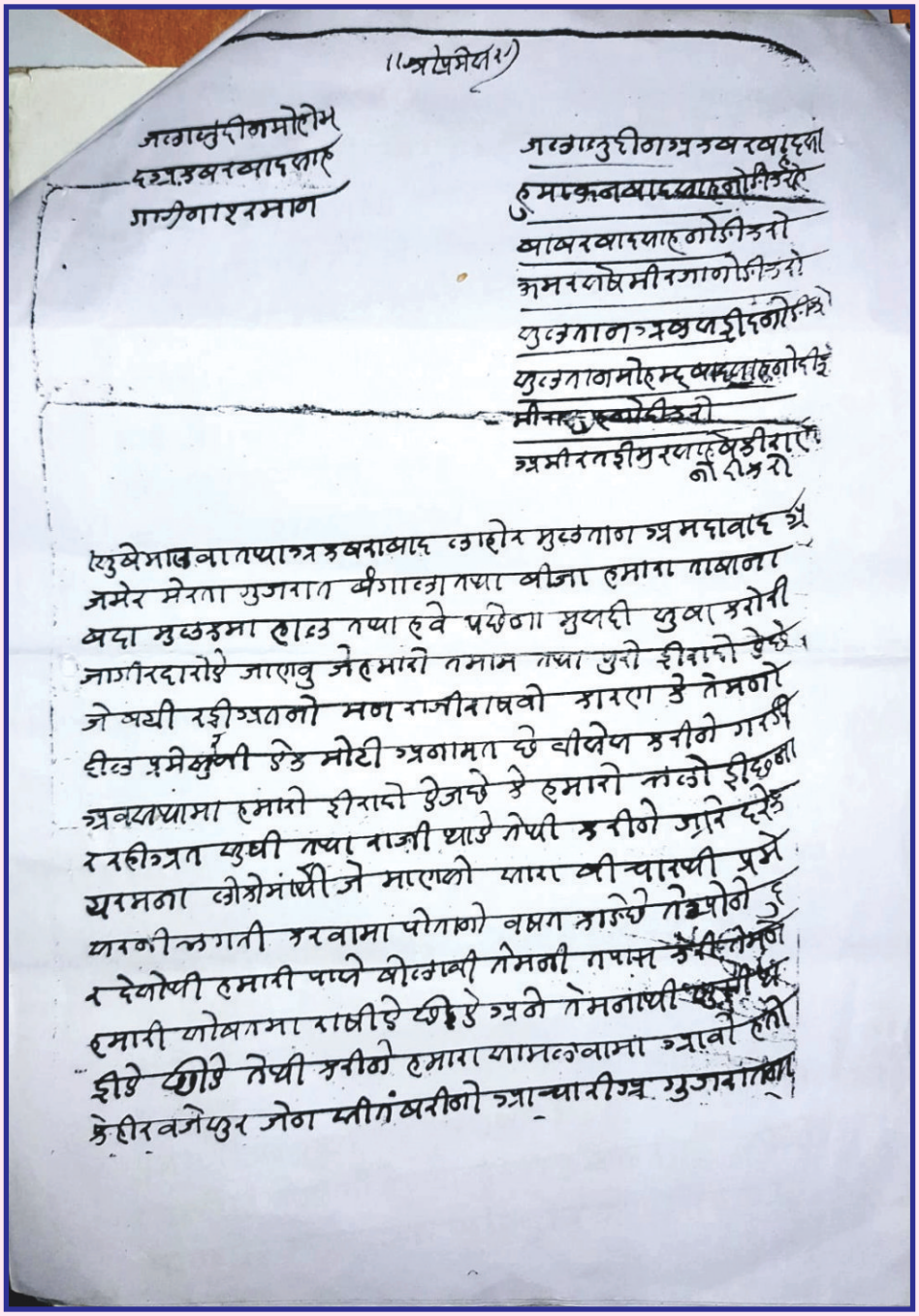

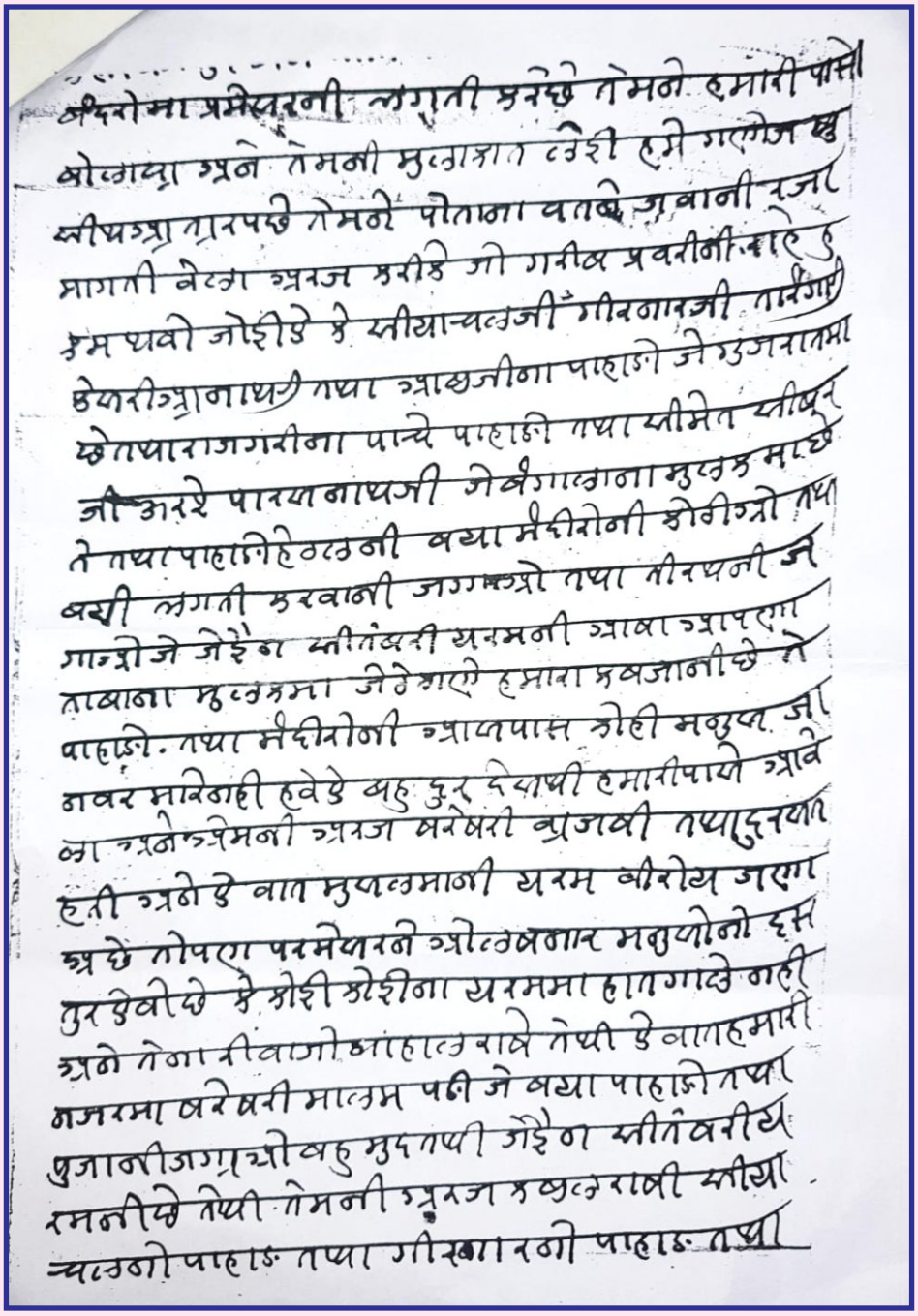

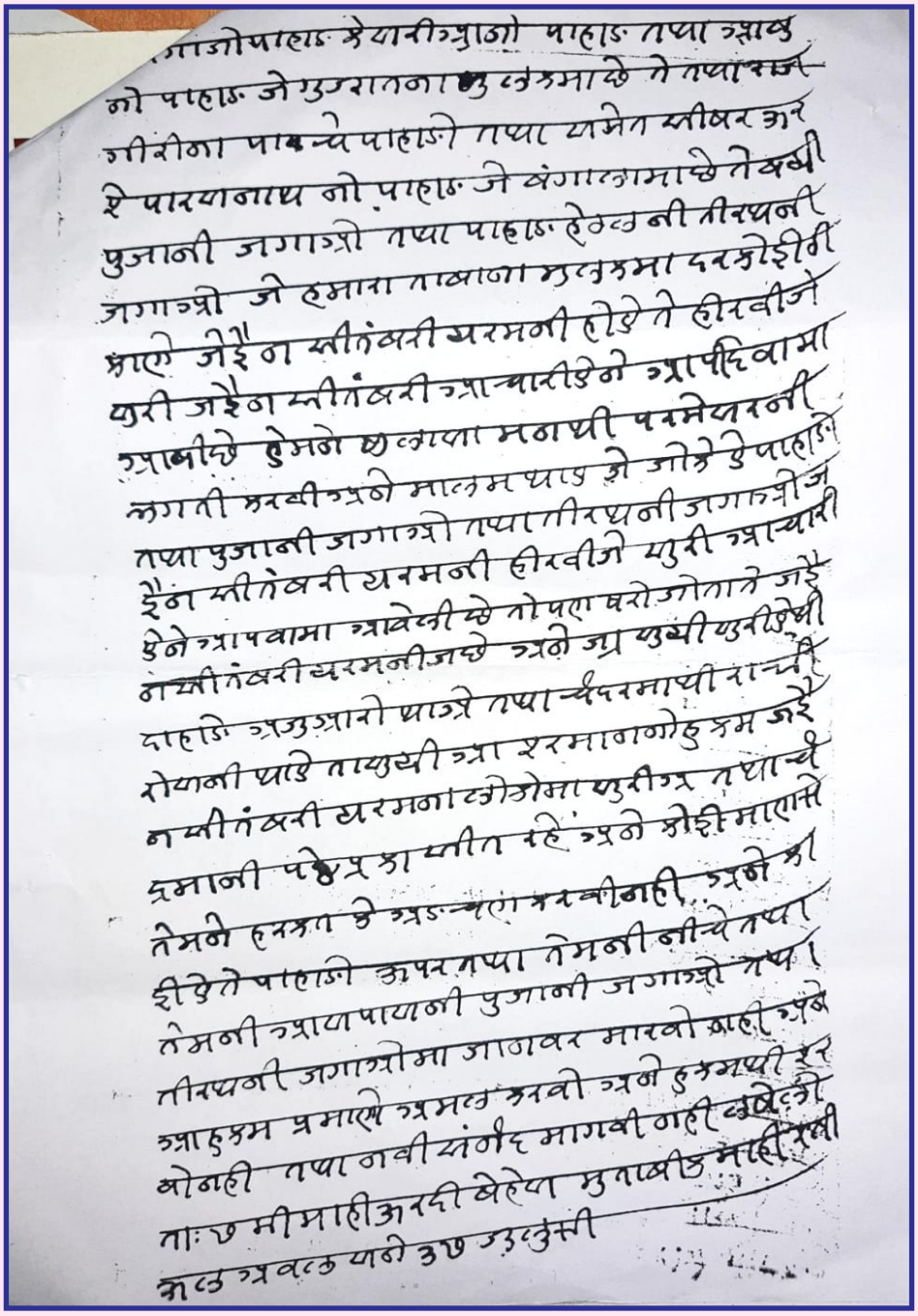

૧૯૬. કેસરિયાજી

(કોડ નંબર : ૩૮૪૯–૩૮૫૦)

ઉદયપુરથી દક્ષિણ દિશામાં ૪૦ માઈલ દૂર આવેલા પહાડી પ્રદેશમાં 'ધૂલેવ' નામે ગામ છે. પ્રાચીન વર્ણનકારો ધૂલેવને અગ્રદેશમાં આવેલું કહે છે. તેથી તેની અગ્રાચલ તીર્થ તરીકે પ્રસિદ્ધિ છે. આસપાસનો પર્વત અગ્ર–ખડ્ગ નામે ખ્યાત હશે એમ લાગે છે. બિહામણા જંગલમાર્ગમાં યાત્રીઓ માટે રાજ્ય તરફથી નવ ચોકીઓ મૂકવામાં આવેલી છે, જેમાં તીર–કામઠાં ધારી ભીલો યાત્રીની સાથે રહે છે. આથી લૂંટાવાનો ભય રહેતો નથી, માર્ગમાં આવતાં ગામો પૈકી કાયા, બારાપાલ અને ટિડ્ડી ગામમાં મહારાણાએ ધર્મશાળાઓ બંધાવેલી છે. ધૂલેવ ગામમાં ચાર વિશાળ જૈન ધર્મશાળાઓ છે. અને ૨ જૈન મંદિરો છે.

૧. બજારમાં સુંદર નકશીવાળું ભવ્ય બાવન જિનાલય મંદિર આવેલું છે. નગારખાનામાં પ્રવેશ કરતાં જ બહારના પ્રદક્ષિણાના ચોકમાં એક બીજે દરવાજે આવે છે. તેની બંને બાજુએ પથ્થરના હાથીઓ ઊભા છે. બહારના ગોખલાઓમાં બ્રહ્મા અને શિવની મૂર્તિઓ પાછળથી બેસાડી દેવામાં આવી છે. અહીંથી દશેક પગથિયાં ચડતાં મંડપમાં શ્રીમરુદેવી માતાની હસ્તિઆરૂઢ મૂર્તિનાં દર્શન થાય છે.

આખુંયે મંદિર મૂળગભારો, ગૂઢમંડપ, નવચોકી, સભામંડપ, ભમતીની બાવન દેવકુલિકાઓ, શૃંગારચોકી, શિખર અને કોટબંધી રચનાવાળું છે. મૂળગભારામાં મૂળનાયક શ્રીઋષભદેવ ભગવાનની ૩ ફીટ ઊંચી શ્યામવર્ણી તેજસ્વી પ્રતિમા બિરાજમાન છે. આ મૂર્તિની ચમત્કારિતાની ખ્યાતિને લીધે શ્વેતાંબર કે દિગંબર, બ્રાહ્મણ કે ક્ષત્રિય, ભીલ કે બીજી વર્ણના લોકો પણ અહીં દર્શનાર્થે આવે છે. ભીલો આ ભગવાનને 'કાળાદેવ' નામે પોતાના ઈષ્ટદેવ તરીકે માને છે. એ લોકો ભગવાનના નવણનો એવો પ્રતાપ અનુભવે છે કે એ નવણનો એક છાંટો લીધા પછી જીવ જાય તો પણ જૂઠું બોલતા નથી. શ્રીતેજવિજયજીએ રચેલા 'કેસરિયાજીના રાસ' માં આ મૂર્તિના ચમત્કાર વિશે વિસ્તારથી વર્ણન કરેલું છે. આ મૂર્તિ પર પુષ્કળ પ્રમાણમાં કેસર ચડતું હોવાથી એ 'કેસરિયાજી'ના નામે ઓળખાય છે.

મૂળનાયકની મૂર્તિ વિશે એમ કહેવાય છે કે, આ પ્રતિમા પહેલાં ઉજ્જૈનમાં હતી. ત્યાંથી વાગડદેશના બડોદા ગામમાં આવી[૧] અને ત્યાંથી ધૂલેવ ગામમાં લાવવામાં આવી. આ પ્રતિમા અહીં કયારે આવી એની સાલ જાણવામાં આવી નથી પણ 'ઈંપીરિયલ ગેઝેટિયર'ના વર્ણન મુજબ આ મૂર્તિ તેરમા સૈકાના અંતમાં લાવવામાં આવી હશે.[૨]

આ મૂર્તિ ખૂબ પ્રાચીન હોવાથી કેટલીયે જગાએ ખાડાઓ પડી ગયેલા હતા તેથી લેપ કરાવેલો છે. મૂર્તિ ઉપરનું પરિકર પ્રાચીન છે. તેમાં બંને બાજુએ બે ઈંદ્રો, બે કાઉસગ્ગિયા જિનપ્રતિમાઓ, અને મૂર્તિની નીચેના ભાગમાં નાની આકૃતિઓ છે, જેને નવગ્રહ કહે છે. વળી હાથી, સિંહ, દેવી વગેરેની આકૃતિઓ અને તેની નીચે વૃષભોની વચ્ચે દેવી વગેરેના આકારો કોતરેલા છે. ગૂઢમંડપના ગોખલાઓમાં પણ મૂર્તિઓ પધરાવેલી છે.

એમ કહેવાય છે કે, અસલ આ મંદિર ઈંટોનું બનેલું હતું. તે તૂટી જતાં તેના જીર્ણોદ્ધાર રૂપે સૂર્યવંશી મહારાણા મોકલ જ્યારે ચિતોડની રાજગાદીએ (ચૌદમી સદીમાં) હતા ત્યારે આ મંદિર પથ્થરનું બનાવવામાં આવ્યું. સામાન્ય રીતે તપાગચ્છાચાર્ય શ્રીજગચ્ચંદ્રસૂરિના સમયમાં જ તેમના પ્રબળ પુરુષાર્થથી મેવાડના રાણાઓ જૈનો સાથે નિકટ સંબંધમાં આવ્યાની ઇતિહાસ સાખ પૂરે છે.

આ મંદિરમાંથી મળી આવેલા ત્રણ શિલાલેખો ઉપરથી 'ઇંડિયન એંટીકવેરી'માં જણાવ્યું છે કે, આ મંદિરોનો ચૌદમી અને પંદરમી શતાબ્દીમાં જીર્ણોદ્ધાર થયો.[૩] સભામંડપની ભીંત પર ઉત્કીર્ણ સં. ૧૪૩૧ નો શિલાલેખ આ પ્રકારે વંચાય છે:—

---

૧. બડોદાનું પુરાતન મંદિર આજે તો ભૂમિશાયી છે. તેના પથ્થરોથી બનાવેલો એક ચબૂતરો વડલા હેઠળ આજે હયાત છે.

૨. × × × It is said to have been brought from Gujarat towords the end of the thirteenth century. × × × .—" The Imperial Gezeteer of India." Vol. XXI (New edition 1908) P. 16.

૩. It is difficult to determine the age of this building, but three inscriptions mention that it was repaired in the fourteenth and fifteenth century.—" Indian Antiquary," Vol. I.

"श्रीकायावासवासीता केवलावदाग नमो क्षमाग्रत(?) आदिनाथ(यं) प्रणमति-विक्रमादित्यसंवत १४३१ वर्षे वैशाख सुदि अक्षय तिथौ बुधदिने चादीना धुरांल ×××॥"

આ સિવાય સં. ૧૪૩૮, સં. ૧૫૧૯ ના લેખો પણ મળે છે. એક શિલાલેખથી જણાય છે કે, વિ સં. ૧૬૮૫ ના ભાદરવા વદિ ૫ ને સોમવારના દિવસે મંદિરનો મધ્ય ભાગ બની ચૂકયો હતો. એ પછી મંદિરનાં પગથિયાં ચઢતાં જે શ્રીમરુદેવી માતાની મૂર્તિ શ્વેતાંબરીય દૃષ્ટિ મુજબ મૂકવામાં આવી છે તેની પાસે જ સં. ૧૬૮૮ માં સ્થાપન કરેલાં ઉપાધ્યાય શ્રીભાનુચંદ્ર અને સિદ્ધિચંદ્ર નામના ગુરુશિષ્યનાં ચરણયુગલોની સ્થાપના કર્યાના તે પર શિલાલેખો મોજુદ છે.

નવચોકીનો ભાગ સં. ૧૮૪૩ માં શ્રીજિનભક્તિસૂરિ અને શ્રીજિનલાભસૂરિના ઉપદેશથી બંધાવાયો છે એ સંબંધી લેખો પણ મળે છે. નવચોકીના મંડપના દક્ષિણ કિનારા ઉપર પાષાણનો એક નાનો સ્તંભ ઊભો છે. તેની ચારે તરફ તેમજ ઉપર નીચે નાના નાના ગોખલાઓ બનેલા છે. લોકો આને મસ્જિદનો આકાર માને છે. મુસ્લિમ સત્તા વખતે આ મંદિરના રક્ષણ માટે આવો આકાર ઊભો કરવામાં આવ્યો હોય તો આશ્ચર્ય જેવું નથી.

આ નવચોકીમાંથી સભામંડપમાં જવા માટે ત્રીજું પ્રવેશદ્વાર છે. ગર્ભગૃહ ઉપર ધ્વજા-દંડસહિત વિશાળ શિખર છે અને સભામંડપ, નવચોકી તેમજ બહારની શૃંગારચોકી ઉપર ઘૂમટો છે. મંદિરની ત્રણે બાજુએ દેવકુલિકાઓની હારમાળા ઊભી છે, જેમાં પ્રત્યેકના મધ્યમાં મંડપ સહિત એકેક દેરી બનેલી જોવાય છે. આ દેવકુલિકાઓની પંક્તિના મધ્યમાં બનેલાં મંડપવાળાં ત્રણ મંદિરોને અહીંના લોકો શ્રીનેમિનાથ ભગવાનનું મંદિર કહે છે પરંતુ શિલાલેખો અને અંદરની મૂર્તિના લેખો આને શ્રીઋષભદેવનું મંદિર હોવાનું જણાવે છે. આ દેવકુલિકાઓ અને ગર્ભગૃહના આંતરાલમાં અંદરનો પ્રદક્ષિણાપથ છે. આ બધી દેરીઓ પાછળથી બનેલી છે.

પં. શ્રીગૌરીશંકર ઓઝા જણાવે છે કે–"આ મંદિરના ખેલામંડપમાં તીર્થંકરોની ૨૨ મૂર્તિઓ અને દેવકુલિકાઓમાં ૫૪ મૂર્તિઓ વિરાજમાન છે. દેવકુલિકાઓમાં વિ. સં. ૧૭૫૬ માં બનેલી શ્રીવિજયસાગરસૂરિની મૂર્તિ પણ છે. પશ્ચિમની દેવકુલિકાઓમાંથી એકમાં અનુમાનથી ૬ ફીટ ઊંચું પથ્થરનું એક મંદિર જેવું બનેલું છે, જેના પર તીર્થંકરોની ઘણીયે નાની નાની મૂર્તિઓ ખોદેલી છે, આને લોકો 'ગિરનારજીનું બિંબ' કહે છે. ઉપર્યુક્ત ૭૬ મૂર્તિઓમાંથી ૧૪ મૂર્તિઓ પર લેખ નથી, લેખવાળી મૂર્તિઓમાંથી ૩૮ દિગંબર સંપ્રદાયની અને ૧૧ શ્વેતાંબરોની છે.... .....લેખવાળી મૂર્તિઓ વિ. સં. ૧૬૧૧ થી ૧૮૬૩ સુધીની છે."[૪]

આ ઉપરથી સહેજે અનુમાન નીકળે છે કે, ચૌદમા સૈકા લગભગમાં જીર્ણોદ્ધાર કરેલા આ મંદિરમાં શ્વેતાંબર આચાર્યોએ જીર્ણોદ્ધાર અને પ્રતિષ્ઠા કરાવેલાં છે જ્યારે દિગંબર મૂર્તિઓ કોઈ પ્રસંગે પાછળથી પધરાવવામાં આવી છે, જેમાં મોટે ભાગે લેખવાળી મૂર્તિઓને પસંદ કરવામાં આવી છે.

મંદિરમાં શ્વેતાંબર વિધિ મુજબ સ્વર્ગસ્થ શ્રીફતેસિંહજી મહારાણાએ પોતાના તરફથી સવા લાખ રૂપિયાની આંગી ચડાવી હતી. મહારાણાઓએ આ મંદિર પ્રત્યે પરંપરાગત ભક્તિ બતાવેલી છે અને જ્યારે તેઓ મંદિરના દર્શનાર્થે આવે છે ત્યારે તેઓ મંદિરના બીજા દ્વારથી પ્રવેશ કરતા નથી પરંતુ બહારના પ્રદક્ષિણાપથમાં બનેલા નાના દ્વારથી જ પ્રવેશ કરે છે. મંદિરનો હાલનો બધો વહીવટ એક જૈન કમિટિના હાથમાં છે.

૨. બહારના ભાગમાં આવેલા શ્રીજગવલ્લભ પાર્શ્વનાથ ભગવાનના દેરાસરની પ્રતિષ્ઠા સં. ૧૮૦૧ માં શ્રીસુમતિચંદ્ર મહારાજે કરાવ્યાનો લેખ તેમાં મોજુદ છે.

સં. ૧૮૬૦ માં રચાયેલી એક 'લાવણી' પરથી આ મંદિરનો કોટ એ સમયે બંધાવાયો હશે એમ લાગે છે:—

"देवल तो मजबूत बन्या है, उपर इंडा सोनेका। ओलुं दोलुं कोट बनाया, सब संगीन बंद चूनेका॥"

આ બધા પુરાવાઓ ઉપરથી નિઃસંદેહ આ શ્વેતાંબર તીર્થ હોવા છતાં સૌ કોઈના માટે વંદનીય તીર્થ બનેલું છે.

૪. 'मेवाडराज्यका इतिहास' भा० १ पृ० ४३.

पाठक ! इस प्रकरण में राजवंशीयों ने इस तीर्थ के लिये या इस तीर्थ से सम्बन्ध रखनेवाले परवाने समय समय पर दिये है, उनका कुछ बयान करना चाहता हुँ कि सो लक्ष देकर पढियेगा।

प्रथम मुगल बादशाह अकबर जिनका नाम इतिहास जानने वालों से छिपा नहीं है। एक आदेश श्रीमान् हीर विजयसूरिजी (जो श्वेताम्बराचार्य थे) को लिख दिया हे उस में भी श्री केसरियाजी तीर्थ का नाम लिखा गया है। जिसकी नकल देखिये।

मुगल बादशाह अकबर ने निज के राजय में सेंतीसवे वर्ष में एक पट्टा श्रीमान् हीरविजयसूरिजी महाराज को कर दिया है। उस पट्टे में इस विषय के साथ सम्बन्ध रखने वाले फिकरे इस मुवाफिक है।

"हीरबीजेसुर (हीरविजयसूरि) जैन श्वेताम्बर के आचार्य गुजरात के बंदरों में परमेश्वर की भक्ति करते है। इन को मेरे पास बुलाया और इनकी मुलाकात से मैं बहुत खुश हुआ। उसके बाद इन्होंने अपने वतन में जाते वख्त अर्ज की के –

जो गरीब परवर की राह पर हुक्म होना चाहिये। कि सिद्धाचलजी, गीरनारजी, तारंगाजी, केसरियाजी और आबू के पहाड जो गुजरात में है तथा राजगिरी के पांचों पहाड तथा समेतशिखरजी उर्फे पार्श्वनाथजी जो बंगाल के मुल्क में है, वह और पहाड़ों के नीचे (तलेटा) तमाम मन्दिर की कोठीयां तथा तमाम भक्ति करने की जगह तथा तीर्थ कीजगह जो जैन श्वेताम्बर धर्म की तमाम मेरे मुल्क मे जिस जगह जो हमारे कब्जे की है उन पहाड़ों तथा मन्दिर की आसपास कोई आदमी जानवर नहीं मारे ..... यहतमाम पहाड और पूजा की जगह बहुत मुद्दत से जैन श्वेताम्बर धर्म की है। इसलिये इन की अर्ज मंजूर की गई। सिद्धाचल का पहाड़ तथा गिरनार का पहाड़ तथा तारंगा का पहाड़ तथा केसरिया का पहाड़ तथा आबू का पहाड़ जो गुजरात के मुल्क में है वह तथा राजगिरी के पांचों पहाड़ तथा समेतशिखर उर्फे पार्श्वनाथ पहाड़ जो बंगाल में है यह तमाम पूजा की जगह हीरबीजेसुर जैन श्वेताम्बर आचार्य को दे दी गई हे..... वगैराह।"

श्रीमान् अकबर बादशाह ने यह दस्तावेज संवत् 1635 में जैनाचार्य को लिख दी जिस की पूरी नकल "कृपारम कोष" व "सुरिश्वर और सम्राट" नाम की पुस्तकों में छपी है, और यह परवाना श्रीमान् सिद्धिचन्द्रजी भानूचन्द्रजी जो आचार्य श्री हीरविजयसूरिजी के शिष्य थे और बादशाह ने आपको "खुशफहम" की पदवी दी थी व इनके चरण तीर्थ केसरियानाथजी में मरुदेवीजी के पास ही स्थापित है, इनके साथ आचार्य महाराज के पास परवाना भेजा था। जिसका सिबूत कृपारस कोष पृष्ठ 39 पर छपा है और मूल ग्रन्थ पृष्ठ 21 पर बयान है कि–

"यज्जीजिया आकर निवारण मेषचक्रे, या चैत्य मुक्तिरपि दर्दममुद्ग लेभ्यः। यद्द्वन्दिबन्धनमपा कुरुते कृपाङ्गो यत्सत्करो त्यवमराजगणो चतीन्द्रान्।।126।।"

य जन्तु जातमभयं प्रतिमा सषट्कं यच्चाज निष्टविभयः सुरभी समूहः इत्यादि शामनमनुनतिकारणेषु ग्रंथोऽयमेव भवतिस्म परं निमित्तम्।।127।।

बिल्कुल साफ बात है कि उक्त कथन व परवाने से भी यह तीर्थ श्वेताम्बर समाज का ही साबित होता है, और श्रीमान् सम्राट महोदय ने परवाना लिख सूरिजी महाराज के पास भेजा

जिसका हाल धीरवीर शिरोमणि महाराणाधिराज प्रतापसिंहजी को मालूम होने पर आपने अनुमोदनापूर्ण एक परवाना सूरिजी महाराज के नाम लिख भेजा था, जिसकी नकल भी पाठकों के सामने है देखिये।

"स्वस्ति री मगसूदा नगर महाशुभस्थाने सरव ओपमालायक भट्टारकजी महाराज श्रीहीरविजयसूरिजी चरणकमलायएण स्वस्ति श्रीविजय कटक चांवट म..... श सुथाने महाराणा(धी) राज श्रीराणा परताबसिंहजी ली. पगेलागणो बंचसी अठारा समाचार भला है आपरा सदा भला चाहिजे आप बडा है पुजनीक हे सदा करपा राखे जीसुंशेष्ठ रखावेगा अप्रंच आपरो पत्र अणां दिना मांही आयो नही सो करपा कर लिखावेगा श्रीबडा हजूर के बखत पधारवो हुवो जींसमें अठा सुं पाछा पधारतां पादशाह अकबरजीने जैनाबाद में ग्यानरो प्रतिबोध दीदो जीरो चमत्कार मोटो बतायो जीवहिंसा चुरखलो तथा नाम पंखेरु की वेती सो माफ कराई जीरो मोटो उपकार कीदो सो श्रीजैनरा गर में आप अस्याहीज (उद्योत) उद्योतकारी अबार इसमें देखतां आपजुं फँरवे नीं आखी पुरव हिन्दुस्थान अंतरवेद गुजरात सुदां चारो ही देशा में धरमरो बडो उद्धोत (उद्योत) कर देखाणो जठा पादे आप को पधारणो हुवो नहीं सो कारण दस्तुर माफीक आपरे है जी माफीक बोल मुरजाद सामा आवारी कसर पडी सुणी सो काम कारण लेखे भुल रही वेगा जींरो अंदेसो नही जाणेगा. आगासुं श्री हेमाचारजजी ने श्री राज महेमान्या है जीरो पटो कर देवणोजी माफीक मान्या जावेगा श्री हेमाचारजजी पेली श्रीबडगछरा भट्टारकजीने बडा कारण सुँ राज महें मान्या जी माफीक आपने आपरा पगरा गादी उपर पाटवी तपगच्छराने मान्या जावेगा इ सिवाय देश में आपरा गछरो देवरो तथा उपासरो वेगा जीरी मुरजाद श्रीराज सिवाय दुजा गछरा भट्टारक आवेगा सो राखेगा श्रीसमरण ध्यान देव जातरा करे जठे याद करावसी परवानगी पंचोली गोरो सं. 1635 वरसे आसोज सुदी 5 गुरूवार।

इस परवाने को देखते बादशाह के परवाने बाबत और ज्यादे पुख्तगी हो जाती है। महाराणाधिराज के परवाने का भावार्थ विशेष रूप में लिखने लायक है, लेकिन यहाँ इससे सम्बन्ध नहीं है। बादशाह के परवाने कोई महानुभाव जाली बनावटी बतलावे तो यह नहीं हो सकता क्योंकि इस परवाने के सम्बन्ध में ओर भी प्रमाण प्राप्त हो सकते है। देखिये –

(1) अव्वले तो इस सदन के विषय में मी. केन्डी जो हाईकोर्ट के जज रह चुके है वह निज के रिपोर्ट में तारीख 28 दिसम्बर 1875 ई. को लिखते हे, जिसका सार इस मुवाफिक है –

श्रावक लोगों ने यह तमाम सनदी कागजात पेश किये यह सच्चे हैं या झूठे, इसके लिये ठाकुर ने एहतराज किया हो ऐसा मेरे ख्याल में नहीं है और यह सनदें देखते सच्ची हो ऐसा पाया जाता है यह पुराने कागज पर लिखी हुई है और इन पर तरह–तरह की मोहरें लगी है और ऐसी मोहरे बनावटी होना मुश्किल है। इस पर से यह लेख (सनद) असल है – सच्ची है ऐसा मैं मानता हूँ।

इस के सिवाय इन सनदों के लिये जनाब पोलिटीकल एजेन्ट साहब मी. पील ने ता 6 जनवरी सन् 1876 को बम्बई सरकार के नाम कागज लिखा है उसके पांचवे पारे पर बयान किया है जिसका भावार्थ इस प्रकार है।

"सिबूत (सनद) देखने से मालुम होता है कि दिल्ली के बादशाह के फरमान (पट्टे) से यह पवित्र पहाड़ श्रावकों के कब्जे में था और इसकी मालिकी बखशीश लेने वाले की ही बिना किसी तरह की हरकत के पहले से ही रही है और ऐसे मालिकाना हक्क के लिये यह सनद मजबूत सिबूत है।"

इन दोनों लेखों से भी बादशाह का दिया हुआ पट्टा प्रमाणित और असल मानना पड़ेगा और पट्टे में तीर्थ केसरियाजी का नाम है सो पाठकों से छिपा नहीं है।

मेवाड़नाथ ने तो जैन समाज की व इस तीर्थ की बहुत सहायता समय–समय पर की है और कई मरतबा पट्टे परवाने लिखा दिये है जिनका कुछ वर्णन हम यहां लिखते हैं।

(3) महाराणा श्री जगतसिंहजजी ने सम्वत् 1802 वैशाख सुदी 6 बुधवार को लिखाया सी अब तक मौजूद है।

(4) सम्वत् 1874 जेठ सुदी 14 गुरुवार को एक परवाना महाराणा जी श्री भीमसिंहजी ने लिखा दिरया जिससे भी कुल अधिकार जैन श्वेताम्बर पंचों का पाया जाता है।

(5) सम्वत् 1882 फाल्गुन वदी 7 बुधवार को एक परवाना सलूम्बर के रावजी साहब श्री पदमसिंहजी सिसोदिया खूमजी के नाम लिखा है। जिसको देखते भी यह पाया जाता है कि इस तीर्थ पर कदीम से जैन श्वेताम्बर पंचों का अधिकार है।

(6) सम्वत् 1889 जेठ विद 5 रविवार को एक परवाना महाराणाधिराज श्री जवानसिंहजीने समस्त सेवक भण्डारीयों के नाम लिखा है उसमें भी यह बयान है कि "नगर सेठ वेणीदासजी विगेरे जैन श्वेताम्बरी पंचों का कह्या माफक काम करज्यो।"

(7) सम्वत् 1889 जेठ विद 14 का लिखा हुवा परवाना उदयपुर दीवान साहेब महेताजी श्री शेरसिंहजी ने भण्डारी सेवकों के नाम लिखा जिसमें भी ऊपर के परवाने मुवाफिक ही लिखा है।

(8) सम्वत् 1906 वैशाख प्रथम सुदी 9 को एक परवाना महाराणाधिराज श्री सरुपसिंहजी ने भण्डारी जवानजी वगैरह के नाम (28) अट्ठारह कलमं मुकर्र कर लिखा दिया जिस की छट्ठी कलम में बयान है कि –

"सेठ जोरावरमलजी सेठ हुकमीचन्दजी विगेरे पंचों का भला आदमही की सलाह मुजब काम करज्यो।"

इसमें भी श्वेताम्बरियों का पूरा हक्क पाया जाता है।

(9) सम्वत् 1906 वैशाख विद 9 शनिवार को दीवान साहब श्री महेताजी शेरसिंहजी ने भण्डारी सेवकों के नाम लिखा है उससे भी श्वेताम्बर समाज का हक्क पाया जाता है।

(10) सम्वत् 1907 भादवा सुदी 9 को दीवाना साहब श्री शेरसिंहजी ने भण्डारीयों के नाम लिखा जिसमें लिखा है कि –

"थाने महाराणा श्री सरुपसींघजी कलमबंधी को परवानो कर दीदो है जी माफक अठा सुँ सेठ हकमीचन्दजी माणकचन्दजी बठे आवे है सो बन्दोबस्त करे वीं मुवाफिक कराय दीजो।"

(11) सम्वत् 1889 मगसर विद 14 के परवाने की पूरी नकल पहले लिख चुके है।

अष्टापद तीर्थ : हिमालय श्रृंखला का पर्वत

यह तीर्थ हिमालय पर्वत के कैलाश पर्वत पर स्थित जो जैन साहित्य के अनुसार अयोध्या के उत्तर में श्री ऋषभदेव भगवान का निर्वाण हुआ था। यह तीर्थ उस समय अयोध्या से 12 योजन (75 किलोमीटर) दूर व पर्वत की ऊँचाई 8 योजन है और उस समयकाल सेम दूरी व ऊँचाई भी कम हुई है।

वर्तमान में इस तीर्थ को भारत ने आठ भागों में विभक्त किया और इसी पर्वत पर मानसरोवर भी है। शिव पुराण में भी यह उल्लेख है कि

ऋषभदेव भगवान इसी पर्वत पर मोक्ष सिधारे उस समय तीन स्तूपों का निर्माण भी राजा भरत द्वारा कराया गया था।

इसके साथ–साथ भगवान ऋषभदेव के मुख से सुनकर यहां पर शेष 23 तीर्थंकर व ऋषभदेव भगवान की 24 प्रतिमाएं उनके देह व रंग अनुसार प्रतिष्ठित कराई। इसी प्रकार राजा भरत भी अनेक मुनियों के साथ मोक्ष सिधारे और यह भी उल्लेख है कि हस्तगिरी से मोक्ष सिधारे, यह शोधार्थी का विषय है।

राजा सागर चक्रवती के पुत्रों ने तीर्थ की रक्षा की, तीर्थ के चारों ओर बड़ी खाई बनाई जैसा कि त्रिपष्टा पुरूष शलाका चरित नामक पुस्तक में स्पष्ट है: (स व ॅ ज्ञ ऊँचाई श्री हेमचन्द्र सूरीश्वर जी महाराज द्वारा रचित)

आवागमन के साधन न होने से इसके धवल गिरि के नाम सम्बोधित करने का उल्लेख है। यहां नरेश श्री राजा श्रवण ने भी इस तीर्थ पर गान नृत्य में प्रभु–भक्ति में लीन होकर तीर्थंकर गौत्र को उपार्जित किया और महावीर भगवान के गणधर श्री गौतम स्वामी ने अपनी लब्ध्दि से 500 तापक्ष का पारणा कराने का उल्लेख है। आज भी यह तीर्थ अंग मात्र है। आज भी यह तीर्थ बर्फीली बर्फ से ढका हुआ है।

वर्तमान में इसकी ऊँचाई 6714 मीटर (समुद्र तट) 28000 फीट है। समुद्र तट से 4560 मीटर (3725 फीट) है इसी स्थान को हिन्दू व बुद्ध के अनुयायी भी अपने तीर्थ मानते हैं। यहां पर जाने के लिए दो मार्ग है।

तिब्बत से होकर अलमोड़ा व यहां से पैदल या खच्चर से जाना होता है जिसमें लगभग एक माह लगता है और दूसरा मार्ग नेपाल की राजधानी काठमाण्डू होकर जाता है।

मध्य एशिया व पंजाब के धर्मतीर्थ नामक पुस्तक में यह स्पष्ट है कि यह कैलाश पर्वत में स्थित है और मुनि श्री जयन्त विजय जी म.सा. ने भी अपनी रचना से स्पष्ट किया है कि यह तीर्थ कैलाश पर्वत में स्थित है।

यह प्राकृतिक नहीं है, इसको देखने

से स्पष्ट है कि इस तीर्थ को खुदाई करके बनाया गया है। प्राकृतिक पहाड़ होता तो ऊपर से नीचे की ओर ढलान होता है लेकिन ऐसा भी इसकी बनावट नीचे से उपर की ओर है। इस तीर्थ तक तो कोई भी नही जा सकता, लेकिन दर्शन करते हैं तो 5–8 किलोमीटर दूर रहकर दर्शन कर सकते हैं।

शिखर आदि बर्फ से ढका हुआ है। हम काल्पनिक रूप से सदस्य के अनुसार बनाकर दर्शन कर सकते हैं।

जैन मुनि श्री जयंत विजय जी महाराज सा. के द्वारा रचित पुस्तक मध्य एशिया व पंजाब में धर्म तीर्थों का वर्णन करते हुए अष्टापद तीर्थ का वर्णन करते हुए इस तीर्थ की ओर जाने का विस्तृत मार्ग बताया है जो इसी प्रारंभ में वर्णन किया है।

एक और कथा अनुसंधानकर्त्ता द्वारा बताया गया है कि शिवजी का कैलाश पर्वत और अष्टापद तीर्थ एक ही है। यह बताया गया है कि इस पर्वत पर ऐसा स्थान है। इस पर्वत को देखने से यह ज्ञात होता है कि यह प्राकृतिक पर्वत ही है वरण् इसका निर्माण किया गया है और चारों ओर से देखने से ऐसा लगता है कि इसका आकार चौकोर होकर चारों ओर एक जैसा ही है।

चारों ओर एक चौड़ी खाई बनी हुई है जहां हमेशा रूई के आकार की बर्फ पड़ती रहती है। ऊपर से गोला है और इसका शिखर बर्फ से ढका हुआ है और ऊपर के हिस्से पर सोने के कलश जैसा चमकता रहता है।

इसकी परिक्रमा क्षेत्र भी 60 किलोमीटर है, यहाँ पर जाना बहुत ही कठिन और असंभव भी है। पहाड़ी पर जाने वाले लोग भी लगभग 5 किलोमीटर दूर रहकर ही देख सकते हैं। इसके थोड़ी दूर लगभग 20 कि.मी. दूर पर मानसरोवर झील है जहां पर जैन मुनि श्री ब्रह्मानन्दजी जी म.सा. लगभग 2 माह तक रहकर इसका वर्णन किया है।

कैलाश व मानसरोवर पुस्तक में वर्णन किया है कि कैलाश पर्वत ही अष्टापद तीर्थ है और इस कैलाश पर्वत का फोटो भी पुस्तक के पृष्ठ सं. 10 पर उल्लेखित है। इसको देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि इसकी बनावट समवसरण की तरह है। इन सबका वर्णन करते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि यह अष्टापद नहीं होना चाहिए कि मंदिर के कोई दरवाजा दिखाई नहीं देता, यह एक मिश्र में पाई जाने वाली ममी की तरह है।

सम्भव है कि यह संस्कृति भी भारत से ही गई हो। यह केवल यह भी काल्पनिक होना बताया गया है। (यह निजी मान्यता है) अनुसंधान करने की आवश्यकता है।

मंदिर क्यों बनाए जाते हैं : भाग 2

वर्तमान युग में विशेष तौर में युवा पीढ़ी या शिक्षित सदस्य में यह प्रश्न उठते है कि मंदिर क्यों बनाए जाते हैं जबकि अस्पताल बनाने, भूखे को रोटी देना को दान देना चाहिए। ये मंदिर ही बनाने में ही क्यों दान देते हैं।

मंदिर बनाने में ही दान क्यों दिया जावे ? कॉरोनाकाल में भी कितने लोग मरे है, कितने लोग भूखे मरे आदि–आदि। यदि हम आंकड़ों को देखे तो ज्ञात होता है कि सबसे अधिक मौत अमेरिका में हुई है, वहां पर सभी आधुनिक सुविधाएं उपलब्ध है एवं शिक्षित है, साधन को जोना उपयुक्त नहीं है।

भारत में यह सुविधा का अभाव है तथा अशिक्षित लोग भी अधिक है, स्वास्थ्य की दृष्टि से कमजोर भी है, इसके उपरांत भी इनकी शक्ति विद्यमान है जिससे वे महामारी का सामना करने में सक्षम है, स्वस्थ होने की संभावना अधिक है। इसका अर्थ यह है कि उनमें आध्यात्म शक्ति है, आध्यात्म शक्ति मंदिरों के माध्यम से ही प्राप्त होती है, क्योंकि हमारे धर्म का प्रमुख उद्देश्य दान व पूजा है।

हमारे द्वारा अब प्रश्न यह आता है कि दान क्यों देते हैं ? धर्म का उद्देश्य यह है कि उसके दु:ख हरण में सहयोग देने के उद्देश्य को दान कहा जाता है। स्व का तात्पर्य हम और धन–पराए अर्थात् अन्य।

उन सबके बाद जो पैसा बचता है उसको दान कहा जाता है वह अन्य के प्रयोग में

आता है, कोरोनाकाल की बात करें तो भूखे को अन्न का दिया, उनकी कितने दिन की भूख दूर हुई यदि वे तीन–चार दिन से भूखे है तो तीन दिन की भूख की और आगे भी कुछ दिनों के लिए इसी प्रकार से रोगी के उपचार तक कोई उसका कल्याण नहीं कर सकेंगे।

लेखक का उद्देश्य यह नहीं है कि अस्पताल व स्कूल नहीं बनाए जाए लेकिन वो भी बनाए गए है। मंदिर के बनने से उसे कितने लाभ है जैसे एक मंदिर बनाने में सैंकड़ों वर्ष लगते है जिससे प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से कितने ही लोगों को को रोजगार मिलता है, उनकी भूख दूर होती है, वह मिटती है, सांस्कृतिक वैभव बढ़ता है, आध्यात्मिकता बढ़ती है और सम्यक् दर्शन व सम्यग ज्ञान की बढ़ोतरी होती है तो कल्पना कीजिए कि मंदिर से कितने व्यक्तियों को लाभ होता है ?

लेखक पुनः दोहराना चाहते हैं कि हॉस्पीटल एवं शैक्षणिक संस्था बनाना चाहिए लेकिन वर्तमान में ये एक फैक्ट्री बन चुकी है, इन्हें बनाना आसान है लेकिन चलाना कठिन है।

अस्पताल या शैक्षिक संस्था बनाने में भी किसने दान दिए ? जो मंदिर बनाते हैं वे ही अग्रणी है। इसलिए प्रत्येक छोटे–छोटे ग्राम में किसी न किसी का मंदिर अवश्य मिलेगा ही लेकिन शिक्षण संस्था नहीं होती क्योंकि मंदिर के फलस्वरूप सम्यग्य दर्शन की प्राप्ति होती है और सम्यग्य ज्ञान मिलता है और धीरे–धीरे व सर्वज्ञ बनने का प्रयास करता है।

जैन संस्कृति हड़प्पा, माया संस्कृति से प्राचीन है जैसे कि मिश्र में खनन करते समय पाया कि वहां जैन साधु की मूर्ति है, उनके चप्पल आदि भी प्राप्त हुए है। पुरातत्त्ववेत्ताओं के अनुसार ये ईसा पूर्व 5000 वर्ष पूर्व की है।

आज जो मंदिर बनाए जा रहे हैं वे भी आने वाली संस्कृति की प्राचीनता सिद्ध करेंगे क्योंकि सृष्टि तो एक न एक दिन नष्ट होगी।

नोट : ''मंदिर क्यों बनाए जाते हैं ?'' इसका प्रथम भाग लेखक द्वारा प्रकाशित ''मरुधरा क्षेत्र के प्रमुख श्वेताम्बर व अन्य मंदिर'' नामक पुस्तक में है।

श्री आदिनाथ भगवान

(श्री मणिक्य स्वामी मन्दिर) श्री कुलपाक जी तीर्थ (आन्धप्रदेश)

यह तीर्थ हैदराबाद से 70 किलोमीटर व आलेर ग्राम से 6 किलोमीटर दूर कुलपाक ग्राम के बाहर विशाल चारदीवारी के बीच स्थित है। ऐसा कहा जाता है कि ऋषभदेव भगवान के मुँह से स्वर्णकर भरत राजा ने भगवान के निर्वाण स्थल अष्टापद तीर्थ पर 24 तीर्थंकर की प्रतिमा प्रतिष्ठित कराई गई उस समय अपनी अंगूठा में जड़े माणिक्य रत्न से एक आदिनाथ भगवान की प्रतिमा बनवाई जो यह वही प्रतिमा है।

ऐसी मान्यता है कि लंकापति रावण ने देवीय शक्ति द्वारा यह प्रतिमा प्राप्त की थी वह अपनी पत्नी मन्दौदरी को पूजा के लिए अर्पण की। वह काल समय तक लंका में रही और लंका के पतन होने पर अधिष्ठायक देव ने इस प्रतिमा को समुद्र में डाल दी। अधिष्ठायक देव की आराधना से यह प्रतिमा राजा शंकर को विक्रम संवत् 680 में प्राप्त हुई और बाद में पश्चात् मन्दिर का निर्माण करवाकर यहां पर प्रतिष्ठित कराई।

यहां पर वि.सं. 1333 का एक शिलालेख प्रापत हुआ जिसमें श्री माणिक्य स्वामी का नाम उल्लेखित है, इसीलिए इसको माणिक्य स्वामी तीर्थ कहा जाता है।

वि.सं. 1481 के उपलब्ध शिलालेख से आचार्य श्री रत्नसिंह सूरि जी म.सा. की श्री निश्रा में वि.सं. 1665 में आचार्य श्री रत्नसिंहसूरि जी म.सा. की निश्रा समाज द्वारा जीर्णोद्धार हुआ और वि.सं. 1665 में आचार्य श्री विजयसेन सूरि जी म.सा. का नाम उत्कीर्ण है और वि.सं. 1767 चैत्र शुक्ल 10 के दिन पं. श्री केसर कुशल जी के साहि..... द्वारा जीर्णोद्धार हुआ।

वि.सं. 2034 में पूर्ण जीर्णोद्धार होने का भी उल्लेख है।

ऐसा भी कहा जाता है कि शिखर की ऊँचाई 69 फीट है और जो बाद में 89 फीट हुई। जो वर्तमान में सभा मण्डप का जीर्णोद्धार हुआ।

मंदिर में श्री महावीर भगवान की प्रतिमा भी स्थापित है जो फिरोजी रंग की है जो हंसमुख मुद्रा की है।

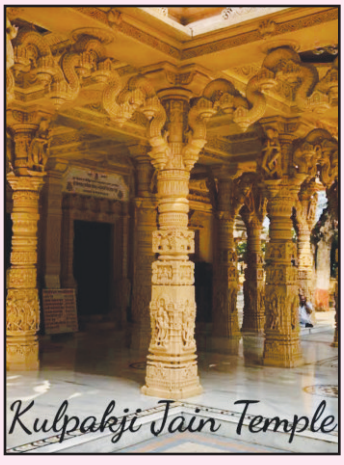
Kulpakji Jain Temple

श्री चिन्तामणि पार्श्वनाथ भगवान का मंदिर, नवसारी

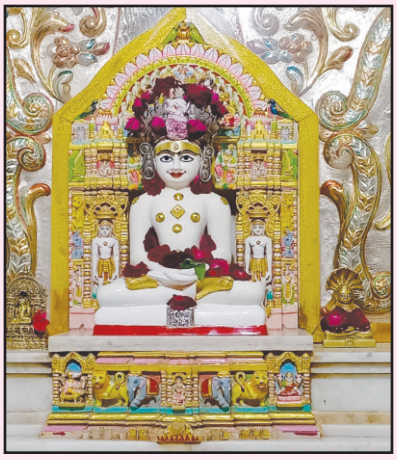

यह विशाल बावन जिनालय मंदिर नवसारी नगर में मधुमति क्षेत्र में स्थित है। जैन साहित्य के अनुसार यह मंदिर विक्रम संवत बारहवीं शताब्दी में निर्मित हुआ है। इसका निर्माण उस समय के श्रेष्ठीवर श्री तेजपाल वस्तुपाल द्वारा कराया गया। यह चमत्कारी तीर्थ है एवं इसकी विशेषता यह है कि प्रतिमा मिट्टी की बनी हुई है।

मुलनायक सीमंधर स्वामी व अनेक भगवान की प्रतिमाए स्थापित है। यह मंदिर 108 पार्श्वनाथ की सूची में सम्मिलित है। इस मंदिर का समय–समय पर जीर्णोद्धार होता रहा है लेकिन अंतिम जीर्णोद्धार लगभग 70 वर्ष पूर्व लालजी महाराज द्वारा कराई गई। इस मंदिर में कांच की भव्य कारीगरी की गई है।

मंदिर के साथ ज्ञान भंडार बना हुआ है। कार्यालय पेढ़ी नवसारी नगर में कुल 11 जैन मंदिर है, उन सभी में से शान्तिनाथ भगवान का बावन जिनालय है। इस मंदिर के सभा मंडप में कांच की जड़ाई की गई है। यह मंदिर लगभग 500 वर्ष प्राचीन है।

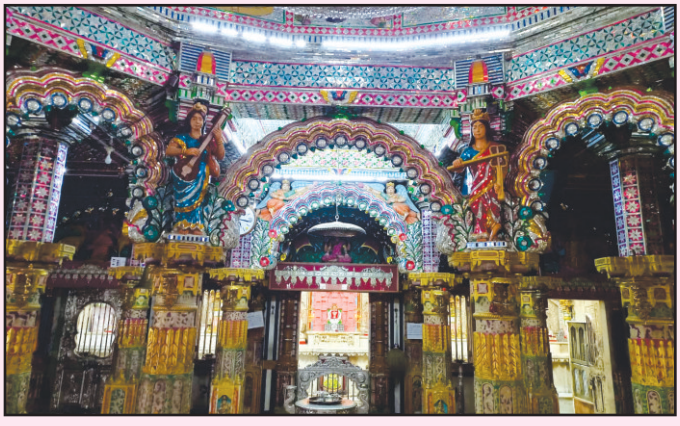

श्री भुवनभानु मानस मंदिर (शत्रुंजय धाम), शाहपुर (मुम्बई)

यह विशाल मंदिर मुम्बई से 80 किलोमीटर दूर मुम्बई–नासिक मार्ग पर स्थित है। जिस प्रकार प्राकृतिक दृष्टि से कश्मीर भारत का स्वर्ग है, उसी प्रकार यह नगर मुम्बई के निकट स्वर्ग की तरह प्राकृतिक सौंदर्य लिए हुआ है। यहां पर अरावली की छोटी–छोटी पहाड़ियों में 12 जिनालय आध्यात्मिक दृष्टि से खिल रहे है।

कश्मीर मनुष्य के मन को शांति दे सकते हैं लेकिन शाहपुर नगर में निर्मित ये जिनालय आध्यात्मिक दृष्टि से आत्मिक शांति प्रदान करते है। मानो यहां पर पेड़–पौधे व धीमी गति से चलती खुली हवा आपको आमंत्रण देते हुए कह रहे हैं कि आइए, आप अपनी आत्मशांति में लीन हो जाए।

लगभग 70X76 फीट वर्ग मीटर में निर्मित बना जिनालय आकर्षण का केन्द्र है जहाँ पर श्वेत पाषाण की विशाल प्रतिमा विराजित है। सभामण्डप में श्री आदिनाथ भगवान की प्रतिमा जो पाताण (शत्रुंजय तीर्थ) के समान है। सभा मण्डप में अनेक भगवान की प्रतिमा के साथ–साथ भगवान ऋषभदेव भगवान के परिवार की भी प्रतिमाएं है जैसे माताजी साध्वी, मरूदेवी माता, पुत्र बाहुबलि, भरत, साध्वी सुंदरी आदि की प्रतिमाएं भी स्थापित है। यह एक अद्‌भुत मंदिर है। इसकी प्रतिष्ठा गच्छाधिपति आचार्य श्री जयघोषसूरीश्वर जी म.सा. द्वारा विक्रम सं. 2059 वैशाख शुक्ला 11 को अनेक साधु–साध्वी व श्रावक–श्राविकाए की उपस्थिति में सम्पन्न हुई।

इन 20 वर्षों में यह तीर्थ इतना अधिक प्रसिद्ध हो गया है कि प्रतिदिन सैंकड़ों की संख्या में दर्शनार्थ आते हैं और दर्शन–पूजा का लाभ प्राप्त कर लेते हैं। इस मंदिर में अधिष्टायक देव भी चमत्कारी है, यहां आने वाले अपन जो भी बोलमा बोलते हैं और पूर्ण होने पुनः दर्शनार्थ आते हैं। इनका रूप नाग का है। वे यदा–कदा भक्तों को दर्शन देते है। लेखक के परिवार ने भी दर्शन किए।

मूर्तिपूजक जैन श्वेताम्बर अनुयायी सदस्य ध्यान देवें

प्रत्येक तीर्थंकर के पांच–पांच कल्याणक हुए हैं, प्रत्येक कल्याणक का अपना अपना महत्व होता है लेकिन दस दिन आवश्यक आराधना भी की जाती है। इन पांचों कल्याणक में से जन्म कल्याणक का निर्वाण कल्याणक का अधिक महत्वपूर्ण स्थान है। देखा गया है कि जन्म कल्याणक भूमि का अपना महत्वपूर्ण स्थान है।

श्री ऋषभदेव भगवान का जन्म कल्याणक स्थान (भूमि) अयोध्या है। लेकिन दुःख की बात है कि अयोध्या में प्रथम तीर्थंकर, प्रथम राजा, प्रथम समाज सुधारक का भव्य मंदिर नहीं है।

वर्तमान में हजारों की संख्या में नूतन मंदिर बन रहे हैं व जीर्णोद्धार का कार्य हो रहा है। अहमदाबाद से पालीताणा मार्ग पर औसतन 5 किलोमीटर दूरी पर एक भव्य तीर्थस्थल बना है।

तीर्थस्थल सम्मेदशिखर जी जाने के मार्ग पर कई कल्याणक भूमि आती है लेकिन उन स्थानों को स्मृति से बाहर कर दिया है। केवल अयोध्या भूमि पर ही सबसे अधिक 19 कल्याणक हुए है जिसमें ऋषभदेव भगवान का कल्याणक भूमि है। यहाँ पर ऋषभदेव भगवान का भव्य मंदिर नहीं है।

विशाल तीर्थ में वहीं अजितनाथ भगवान का ही मंदिर है। अतः मेरा सुझाव है कि पर्याप्त अनुसंधान करके जो जिस स्थान पर जन्म स्थल है वहाँ पर भव्य तीर्थ बनाना चाहिए और यही नहीं एक ही स्थल पर विशाल भूमि खण्ड आवंटन क्रय करा या क्रय कराकर सभी भगवान के कल्यणक तीर्थ, स्थल बनाया जाना चाहिए।

इस ओर आचार्य भगवंतों को निवेदन कर उनसे आदेश व उपदेश प्राप्त कर तीर्थस्थल बनाए जाने पर विचार करना चाहिए।

जैसे कि मल्लीनाथ भगवान व नेमिनाथ भगवान का च्यवन, जन्म, दीक्षा, व केवल ज्ञान का स्थल अनुसंधान कर वहाँ पर भूमि तल व प्रथम तल का मैथिलीनगर (सीतामडी) में आठ कल्याणक मंदिर (तीर्थ) का निर्माण हुआ है जिसको श्री ललित भाई नाहटा निवासी बीकानेर हाल नई दिल्ली मूर्त रूप देकर लाभ किया है।

खम्भात नगर

पूर्व–मध्य गुजरात के आनन्द जिले की एक नगरपालिका है। यह खंभात की खाड़ी के उत्तर में, माही नदी के मुहाने पर स्थित एक प्राचीन नगर है। टॉलमी नामक विद्वान ने भी इसका उल्लेख किया है। प्रथम शती में यह महत्वपूर्ण सागर पत्तन था। 15 वीं शताब्दी में खंभात पश्चिमी भारत के हिंदू राजा की राजधानी था। जेनरल गेडार्ड ने 1700 ई. में इस नगर को अधिकृत कर लिया था, किंतु 1783 ई. में यह पुनः मराठों को लौटा दिया गया। 1803 ई. के बाद से यह अंग्रेजी राज्य के अंतर्गत रहा। नगर के दक्षिण–पूर्व में प्राचीन जैन मंदिर के भग्नावशेष विस्तृत प्रदेश में मिलते हैं।

प्राचीनकाल में रेशम, सोने का समान और छींट यहाँ के प्रमुख व्यापार थे। कपास प्रधान निर्यात थीकिन्तु नदियों के निक्षेपण से पत्तन पर पानी छिछला होता गया और अब यह जलयानों के रुकने योग्य नहीं रहा। फलतः निकटवर्ती नगरों का व्यापारिक महत्त्व खंभात की अपेक्षा अधिक बढ़ गया और अब यह एक नगर मात्र रह गया है।

सामाजिक व आध्यात्मिक दृष्टि से भी यह शहर महत्वपूर्ण रहा है जिसके फलस्वरूप जैन धर्म के कई मंदिर आज भी विद्यमान है जिनमें से अनेक मंदिर 2500 वर्ष पूर्व के निर्मित है जैसे कि मूर्तिकला, चित्रकला स्थापत्य कला से स्पष्ट है

नाम की उत्पत्ति : कुछ विद्वानों का मानना है कि खंभात संस्कृत के शब्द 'कंबोज' का अपभ्रंस है जबकि अरबी लेखकों ने इसकी उत्पत्ति 'कांबया' से बताया है। कुछ लोगों का मानना है कि यह शहर 'स्तम्भ सिटी' हो सकता है। लेफ्टिनेंट कर्नल जेम्स टॉड ने यह स्वीकार किया है कि खंभात शब्द संस्कृत के 'खंभ' और 'आयात' से बना है।

इतिहास :

यह नगर खंभात रियासत की राजधानी था, जिसे 1949 में खैरा (बाद में खेड़ा) जिले में मिला दिया गया। खंभात पूर्व में एक समृद्ध शहर था और रेशम के विनिर्माण के साथ–साथ छींट और सोने के सामान लिए विख्यात था। अरब यात्र अल मसुद्दी ने इसका एक बहुत ही सफल बंदरगाह के रूप में वर्णन किया है। उन्होने 915 ई. में इस शहर का दौरा किया था।

1293 ई. में मार्को पोलो ने भी इसका उल्लेख एक व्यस्त बंदरगाह के रूप में किया था, जिनके अनुसार यहाँ एक सचित्र व महत्वपूर्ण भारतीय विनिर्माण और व्यापारिक केंद्र था। एक समकालीन इतालवी यात्री, मैरिनो सानुड़ो ने भी इस शहर का उल्लेख एक व्यस्त बन्दरगाह के रूप में किया है। 1440 ई. में एक और इतालवी निकोलो डे कोंटी ने इस शहर का उल्लेख समृद्धि और संपन्नता के रूप में किया है।

पुर्तगाली अन्वेषक ड्यार्टे बारबोसा ने भी सोलहवीं सदी में खंभात का दौरा किया। उनका कहना था कि यह शहर काफी भरा–भरा सा है। उनका कहना था कि खंभात में प्रवेश करते ही एक आंतरिक नदी मिलती है, जो मौरोस (मुसलमान) और हिंदुओं (गेंटिओस) की आबादी को बांटती हुयी एक सुंदर व महान शहर का बोध कराती है। यहाँ खिड़्कियों के साथ कई ऊंचे और सुंदर मकान हैं साथ ही अच्छी सड़कें और चौक हैं। व्यापारियों के चारों ओर दुनिया से समुद्र के द्वारा बार बार आने के साथ, बहुत व्यस्त और समृद्ध के रूप में यह शहर दृश्यमान है।

भौगोलिक स्थिति :

यह नगर खंभात की खाड़ी के सिरे पर माही नदी के मुहाने पर स्थित है। यह 15 वीं सदी के उत्तरार्द्ध तक मुस्लिम शासन के अंतर्गत एक समृद्ध बन्दरगाह था, लेकिन खड़ी में गाद जमा होने के साथ बन्दरगाह का महत्त्व समाप्त हो गया। खंभात कपास, अनाज, तंबाकू, वस्त्र, कालीन,नमक और पत्थर के अलंकारणों का वाणिज्यिक और औद्योगिक केंद्र है। इस क्षेत्र में पेट्रोल की खोज हो चुकी है और 1970 से पेट्रो–रसायन उद्योग का विकास किया जा रहा है।

श्री पार्श्वनाथ भगवान का मंदिर, खम्भात

यह तीर्थ खम्भात के खारवाड़ा मौहल्ले में नीला वर्ण की 23" से.मी. ऊँची प्रतिमा है। इसका प्राचीन नाम तृष्णावती नगरी था। जैन साहित्य के अनुसार इस तीर्थ का इतिहास बहुत प्राचीन है। श्री मुनिसुव्रत भगवान के समय से लेकर श्री महावीर भगवान के समय तक यहां कई चमत्कारी घटना घटी, इसके पश्चात् यह प्रतिमा लुप्त रही।

वि.सं. 1111 में नवांगी दीवाकर श्री समयदेव सूरि जी ने देविक चेतना भाव से ही नदी के किनारे पर भक्ति भाव से परिपूर्ण जयन्ती हुआ व स्त्रोत की रचना की जिससे अधिष्ठायक देव प्रसन्न होकर यह प्रतिमा भूमि से अनेकों श्रावकों की उपस्थिति में प्रगट हुई।

वर्तमान मंदिर एक शिलालेख के अनुसार वि.सं. 1165 में श्री माधवसिंह बोल्या श्रेष्ठी की धर्मपत्नी ने पार्श्वनाथ भगवान का मंदिर निर्माण कराया था। वि.सं. 1360 के लगभग एक विशाल मंदिर बनवाकर प्रतिष्ठा कराने का उल्लेख है। पूर्व में कई बार जीर्णोद्धार हुए। अन्तिम जीर्णोद्धार वि.सं. 1984 में सम्पन्न हुआ। शासन सम्राट री नेमिसूरि जी के द्वारा प्रतिष्ठा हुई।

कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमन्त सूरि जी ने वि.सं. 1151 में दीक्षा प्राप्त कर शिक्षा प्राप्त की ओर उस समय कई करोड़पति श्रावकों के घर थे। जिन्होंने अनेक मंदिरों का निर्माण कराया था। जिसके भगवान के साथ भी विद्यमान है।

राजा कुमारपाल के मंत्री उदय भी यहीं के निवासी थे जिन्होंने उदयवसीह नामक मंदिर का भी निर्माण कराया था। वि.सं. 1277 में यहां वस्तुपाल ने ताड़पत्रों पर अनेक ग्रन्थ विख्यात है।

यहां पर श्री हेमन्त सूरि जी का अन्य मन्दिर भी है। यहां पर श्री चिन्तामणि पार्श्वनाथ भगवान के मंदिर कई कलात्मक प्रतिमाएं तथा अवशेष विद्यमान है जो अन्यत्र नहीं मिलते हैं।

श्री अमीझरा पार्श्वनाथ भगवान का मंदिर, गन्धार

यह तीर्थ भरूच से 45 किलोमीटर दूर स्थित है। यह नगर पूर्व में एक महत्वपूर्ण बन्दरगाह था और यहां अनेक जैन मन्दिर थे।

इस नगर ने कई उत्थान व पतन को देखा है लेकिन यहां पर एक भी जैन का घर नहीं है और अधिकतर मुस्लिम आबादी है। इस तीर्थ में प्रतिष्ठित प्रतिमा की श्वेत पाषाण की 70 ईंच ऊँची प्रतिमा है जहां पर यदा–कदा अमीझरा बहता रहता है।

यह प्रतिमा चमत्कारी है। यह तीर्थ एक विशाल परकोटे के भीतर है जहां पर अनेक प्रतिमा स्थापित है। एक प्रतिमा पर उत्कीर्ण लेख पर वि.सं. 1665 का लेख है जिसके अनुसार आचार्य श्री विजय सेन सूरि जी ने प्रतिष्ठा कराई।

अमीझरा बहने से इसे अमीझरा पार्श्वनाथ कहते हैं।

श्री आदिनाथ भगवान

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि : यह प्रतिमा 104 सेमी ऊंची गांव के मध्य स्थित है। यह प्रतिमा नगर के बाहर भूगर्भ से प्राप्त हुई जिसको लेकर जिसके साथ चक्रेश्वरी की प्रतिमा भी थी। श्री चक्रेश्वरी देवी की प्रतिमा वि.सं. 1200 माघ शुक्ला 10 के मंत्री पृथ्वीपाल द्वारा प्रतिष्ठित हुई थी।

तत्कालीन राजा श्री गम्भीरसिंह ने मंदिर का निर्माण करवाकर वि.सं. 1928 माघ कृष्णा को पुनः प्रतिष्ठा करवाई। इसके बाद वि.सं. 1959 से यहां के राजा गम्भीरसिंह के पुत्र राजा धर्मसिंह ने मंदिर का जीर्णोद्धार का मंदिर का कार्य संभाला।

भू–गर्भ से प्राप्त प्रतिमाओं को प्राप्त करने के राजा के पास गए। राजा ने कहा कि गांव में कोई जैन का घर नहीं है और वही कोई मंदिर नहीं है फिर भी प्रतिमाओं से सुपुर्द करने के लिए अच्छा नहीं होगा। अतः आप जैन बन्धु आकर बसे। मैं वे स्वयं मंदिर बनवाऊँगा और सभी को आवास, व्यापार की सुविधा देंगे।

इस प्रकार राजा ने मंदिर का निर्माण कर 30 वर्ष तक सम्भाला और बाद में संघ को सुपुर्द किया। ऐसा उदाहरण अन्य नहीं मिलते हैं।

श्री स्तंभन पार्श्वनाथ जैन तीर्थ
आणंद (गुजरात)

Terms Privacy